॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयताम् ॥

॥ श्रीभगवन्निम्बार्क महामुनीन्द्राय नमः ॥

॥ श्रीहितहरिप्रियायै नमः ॥

अथ—

श्रीहरिप्रिया रसिकमाधुरी

श्रीश्री १००८ श्रीभगवन्निम्बार्क सम्प्रदाय में स्वामी श्री१०८ श्रीहरिव्यासदेवजी महाराज निकुञ्ज में श्रीहरिप्रिया सखी विराजमान इनके निज परिकर की सखनि को जीवन चरित्र सूक्ष्म संग्रह अलीमाधुरी कृत

वाकीं भिवानी ग्राम निवासी—

सेठ परमभागवत हरिगुरुसंत सेवा परायन अर्जुनदास के आत्मज परमभक्त हीरालाल उपनाम हरिचरण-दास ने निज व्यय लगाकर प्रकाशित किया ।

प्रथमबार २५०

सं० १९९९ माधवमास अक्षय-तृतीया
श्रीहरिव्यासाब्द ६५०

कुञ्जक्रीडारसा-स्वादो मूल्यमेतस्य केवलम्

श्रीराधासर्वेश्वरायनमः

मेरो जुगल बिहारी प्यारो सखी सुन्दरी स्याम दुलारौ ॥टेक॥
रंग भवन में राजत है नित सहचरि संग हजारौ ॥ १ ॥
गलबैंया दिये भरे उमंगन नैनन कोर निहारौ ॥ २ ॥
मंद मंद मुसक्यात परस्पर अंग अंग सुकवारौ ॥ ३ ॥
रास विलास हुलास हिये में निस दिन यही अहारौ ॥ ४ ॥
विपन राज की कुंज निकुंजन विहरत सांझ समारौ ॥ ५ ॥
सत चित आनन्दघन रस बरसत रसिकन प्रान अधारौ ॥ ६ ॥
विपन राज की भूमि सीम को पल छिन नाहिं विसारौ ॥ ७ ॥
धाम रूप और लाली रस मय रसना नाम उचारौ ॥ ८ ॥
अग्रवर्तनी श्रीरँगदेवी सेवत रुचि अनुसारौ ॥ ६ ॥
समय समय के राग रागिनी कोकिल सब्द ऊचारौ ॥ १० ॥
हित हरिप्रिया निरख हरख भई बार बार बलिहारौ ॥ ११ ॥
अलीमाधुरी के जीवन धन निज तन मन सब वारौ ॥ १२ ॥

जमुना तट कुंजविहारी जहाँ फूल रही फुलवारी ॥टेक॥
जुही चमेली राय भोगरा मोतिया कुंदानिवारी ॥१॥
जल थल कमल खिले बहु रँग के पति मल्लिका प्यारी ॥२॥
गौर सामरी माधुरी झूरत सँग सोहै सहचारी ॥३॥
पुलिन पवित्र रमनरेती छवि झलमलात उजियारी ॥४॥
कोकिल कीर मधर सुर बोलत श्रीराधा नाम उचारी ॥५॥
अली माधुरी निरख हरख भई निज तन मन सब वारी ॥६॥

मुद्रक--बा० प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, वृन्दावन।

अथ श्रीहरिप्रिया रसिकमाधुरी

भक्ति दानेन शश्वच्च कृष्ण भक्तेषु मानितः ।
शान्तोदान्तः प्रसन्नात्मा लोक श्रेष्ठ सुधापकः ॥२॥

श्रीवृन्दावन स्वामी च श्रीनिम्बार्कं पदाश्रयी ।
रामस्वामी स्वामाही राधाकृष्णो च पादयोः ॥३॥

हिवानन्दस्य मार्गं मज्जकुञ्जेल्लानिशेषवे ।
नाशकश्रीहरिप्रियेषु स्वस्वरूपा निकुञ्जमार्हें ॥५॥

श्रीमुकुन्द देव नाम्नैव भुवी प्रख्याप्यते जनैः ।
श्रीस्वामी हरिव्यासस्य सदापाद प्रपूजकः ॥४॥

दोहा—

रँगदेवी हितु हरिप्रिय, मणिमंजरि रसखान । सेवत श्यामास्याम को उमग भरी हरखान ॥
सहस्र सखिन के यूथ में यथवर्णीनाम । श्रीरँगदेवी रसभरी निरखत छवि अभिराम ॥
रंग भवन राजत सदा, गौरश्याम रसधाम । उमगी सहचरि हिय में सेवत आठों जाम ॥

अथ सखीनाम रतनावलि प्रारम्भ

१-दोहा—बंदो राधाकृष्ण वपु हँस रूप अवतार ;
संप्रदाय आचार्य श्रीसनकादिक मुनि चार ॥

२-श्रीसनक	हरणी सखी
श्रीसनन्दन	हारिणी सखी
श्रीसनातन	हीणा सखी
श्रीसनतकुमार	हीता सखी
३-श्रीनारदजी	मुग्धा सखी, स्निग्धा सखी, विदग्धा सखी, सन्दिग्धा सखी
४-श्रीनिम्बार्क स्वामी	श्रीरंगदेवी सखी
५-श्रीनिवासाचार्यजी	श्रीनव्यवामा सखी
६-श्रीविश्वाचार्यजी	श्रीविश्व भा सखी
७-श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी	श्रीउत्तमा सखी
८-श्रीविलासाचार्यजी	श्रीविलासिनी सखी
९-श्रीसरूपाचार्यजी	श्रीसरसा सखी
१०-श्रीमाधवाचार्यजी	श्रीमधुरा सखी
११-श्रीबलभद्राचार्यजी	श्रीभद्रिका सखी
१२-श्रीपद्माचार्यजी	श्रीपद्मनाभा सखी
१३-श्रीश्यामाचार्यजी	श्रीश्यामा सखी
१४-श्रीगोपालाचार्यजी	श्रीशारदा सखी
१५-श्रीकृपाचार्यजी	श्रीकृपाक्षा सखी
१६-श्रीदेवाचार्यजी	श्रीदेवदेवी सखी
१७-श्रीसुन्दर भट्टजी	श्रीसुन्दरी सखी
१८-श्रीपद्मनाभ भट्टजी	श्रीपद्मा सखी
१९-श्रीउपेन्द्र भट्टजी	श्रीइन्दिरा सखी
२०-श्रीरामचन्द्र भट्टजी	श्रीरामा सखी
२१-श्रीवामन भट्टजी	श्रीवामा सखी
२२-श्रीकृष्ण भट्टजी	श्रीकृष्णा सखी
२३-श्रीपद्माकर भट्टजी	श्रीसुपद्मा सखी

२४-श्रीमदन भट्टजी	श्रीश्रुतिरूपा सखी
२५-[illegible]	[illegible]
२६-श्रीमाधव भट्टजी	श्रीमाधवी सखी
२७-श्रीश्याम भट्टजी	श्रीअसिता सखी
२८-श्रीगोपाल भट्टजी	श्रीगुणाकरि सखी
२९-श्रीबल[illegible] भट्टजी	श्रीवल्भा सखी
३०-श्रीगोपीनाथ भट्टजी	श्रीगोरांगि सखी
३१-श्रीकेशव भट्टजी	श्रीसुकेशी सखी
३२-श्रीगांगल भट्टजी	श्रीपवित्रा सखी
३३-श्रीकेशोकाशमीरि भट्टजी	श्रीकुंकुमा सखी
३४-श्रीश्री भट्टजी	श्रीहितु सहचरि सखी
३५-श्रीहरिव्यासदेवजी	श्रीहरिप्रिया सखी
३६-श्रीमुकुन्ददेवजी	श्रीमणिमंजरि सखी
३७-श्रीव्रजभूषनदेवजी	श्रीव्रजवल्भा सखी
३८-श्रीबनारसी देवजी	श्रीवारिजमुखी सखी
३९-श्रीमोहनदेवजी	श्रीमनमोहनी सखी
४०-श्रीनारायणदेवजी	श्रीनिरमला सखी
४१-श्रीरतनदेवजी	श्रीरतनावलि सखी
४२-श्रीनैनादेवजी	श्रीनीरजनैनि सखी
४३-श्रीरामदासजी	श्रीरशकावलि सखी
४४-श्रीवृन्दावनदासजी	श्रीवृन्दारका सखी
४५-श्रीरघुनाथदासजी	श्रीरसीली सखी
४६-श्रीजमुनादासजी	श्रीजसीली सखी
४७-श्री श्रीस्वामी कल्याणदासजी	श्रीकमलवदनी सखी

दोहा—सखी नाम रतनावली, श्रवन मनन [illegible]।
ताको [illegible] मिलिहैं, गौरस्याम अपनाय॥
रङ्गदेवी निकुञ्ज की, रङ्गभवन के बीच।
सेवत स्यामा स्यामा को, माधुरि अलिवरि जाय॥

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयताम् ॥

॥ श्रीमत् भगवन्निम्बार्क महामुनीन्द्रायनमः ॥

श्लोक–हंसंसनत कुमारं च नारदं निम्बभासकरां
असमदाचार्य परियंतं वंदे गुरूं परंपरां ॥

अथ श्रीहरिप्रिया रसिकमाधुरी प्रारंभ

दोहा–श्रीहितुहरिप्रिया चरणकौ वंदौ वारंवार ।
निज परि करकी सखिन जस कहौ बुद्धि अनुसार ॥

सरस छप्पै छंद–रंग महल में केलि नित्य श्रीपीतम प्यारी ।
श्रीरंगदेवी सेव्य सदां रुचि के अनुसारी ॥
हंससनक नारद निम्बारक पथ जो आवै ।
मिलै कुंज रस रास सहचरी तन जो पावै ॥
नाना कुंज निकुंज होय जो नित्य बिहारा ।
अवलोकत तहां रहे जुगल छवि अति सुकवारा ॥१॥
श्रीनिम्बार्क संप्रदाय यह आदि अनादी ।
हंसवंस जे भये प्रनाली श्रीसनकादी ॥
श्रीनारद मुनि सिष्य भये ब्रह्मा के तनुजा ।
पायौ नित्य बिहार मगन सनकादिक अनुजा ॥
परंपरा जो कुंज केलि दंपति की गाई ।
निम्बभान मुख कहै सहस्र सखि सैव्य सदांई ॥२॥
श्रीनिवास से आदि भये द्वादस आचारज ।
कुंजविहारी इष्ट पुष्ट निज कीयो कारज ॥

सुन्दर भट श्रीकुंज रहसि अष्टादस गाई।
श्रीभट हितु सखी रूप ललित लीला प्रगटाई॥
श्रीस्वामी हरिव्यासदेव प्रगटे अवतारा।
रसिकन के हित कियो प्रगट रस नित्यविहारा॥३॥
तिनके द्वादस सिष्य भये अगतिन गतिदायन।
जिनमें स्वामी मुकुंददेव हरि भक्ति परायन॥
श्रीगुरु श्रीहरि व्यासदेव निज रुचिलै सेवै।
दियो अपनपो खोय शरन पद कौ फल लेवै॥
नित्य विहार उपासना निज तन मन अरपन कियो।
श्रीमुकुंददेव हरिभजन बल हरिगुरुजन आपन कियो॥४॥
इनके सिष्य पर सिष्य भये आचारज जेते।
भक्ति ज्ञान वैराग प्रेम निजजन को देते॥
जिनको जस कछु कहौ सुन्यौ जो श्रीगुरु मुख से।
भव भय भंजन होय मिलै जन हरिपद सुख से॥
गुरु आचारज रूप हरी कहै बेद पुराना।
चरन मरन जे होय मिलै दंपति रस खाना॥५॥
हरि व्यासदेव हरि भजन बलदेवी कौ दिच्छा दई।
खेचर नरकी सिष्य निपट यह अचरज आवै॥
विदित बात संसार संत मुख कीरति गावै।
हरि भक्तन के वृंद रहत नित स्याम सनेही॥
ज्यौं जोगेश्वर मद्ध- लसत मानौ वैदेही।
श्रीभट पद रज परसतै सकल सृष्ट ताकौ नई॥
श्रीहरि व्यासदेव हरिभजन बलदेवी कौदिच्छा दई।

चौ०-श्रीस्वामी हरिव्यासमहन्ता। लिये संगमें शिष्य अनंता॥
भक्ति प्रचारन हेत पधारे। भक्त जननकौ किये सुखारे॥
चारों दिशाविजय किये आपू। गुरू प्रसाद निज भजन प्रतापू॥
सबके हृदय भक्ति रस दीने। अमित जीवकों श्रेय जुकीने॥२॥
बड़े बड़े राजा महाराजा। चरण शरण पूरे सब काजा॥
सबके हृदय भक्ति हरि प्रेरे। लाखों जीव किये हरिनेरे॥३॥
निजबलभजनशिष्यकियदेवी। सुरनर नारि असुर जो सेवी॥
सोई चरित अब कहौं बुझाई। श्रीहरिव्यास महिमा प्रगटाई॥४॥

दो०---श्रीभट गुरू प्रसादते, पायो भक्ति ललाम।
देश देश में जायके, दियो सबन विश्राम॥३॥

चौ०-एक बार दिग विजय करन्ता। पहुंचे चट थावर सँग संता॥
देखि सुमन सुंदर वर बागा। तहँ विश्राम करनमन लागा॥१॥
श्रीस्वामी सन्तन ते भाखा। रहन आज यह मन अभिलाखा॥
सुनि सब सन्तन के मनमाना। लागे सकल करन अस्नाना॥२॥
करिअस्नान ध्यान सब कीना। श्रीस्वामी हरिव्यास प्रवीना॥
श्रीराधा सर्वेश्वरजी की। सेव आरती कीनी नीकी॥३॥
ताहि बाग कछू दूर प्रमाना। चण्डी देवी को अस्थाना॥
तहाँ मनुज इक बकरा लावा। देवी आगे भेंट चढ़ावा॥४॥

दोहा०--बकरा मारत देखि के, सन्त गये दुख पागि।
श्रीस्वामीजी के निकट, कहन गये कछु भागि॥४॥
श्रीस्वामी अति दुखित ह्वै, मनमें कीन बिचार।
हिंसा को अस्थान जहँ, नहिं भोजन अधिकार॥५॥

चौ०-कही आज जनि करो रसोई। सर्वेश्वर को भोगन होई॥
हरिकी इच्छा ऐसी आजू। भजन करौ सब सन्त समाजू॥१॥

श्रीआचारज बानी सुनिके। भजन करन लागे हरि धुनिके॥
सनक सनंदन सनत कुमारा। श्रीनारद मुनि परम उदारा॥२॥
श्रीनिम्बार्क श्रीहरि व्यास। राधा सर्वेश्वर सुख रास॥
श्रीरंगदेवी हरि प्रिया पास। युगल किशोर सकल सुख रास॥३॥
अर्ध निसा भई है जब ही। देवि ताप अँग व्यापी तब ही॥
आठ वर्ष कन्याको रूपा। घर आई सो परम अनूपा॥४॥
चरण परी स्वामी के आई। त्राहि त्राहि राखो शरणाई॥
स्वामी कहा तू कोहै बाई। सो तू मोसन कहै बुझाई॥५॥
अहो नाथ मैं दासी तिहारी। मोहि लेहु अब शरण मझारी॥
रहो सदा मंदिर के माहीं। तुब बल तेज जरन तन चाहीं॥६॥
ताते अब मम रक्षा कीजै। अभय हस्त मो मस्तक दीजै॥
नातरु कतहुँ ठांव है नाहीं। सत्य सत्य भाषों तुम पाहीं॥७॥
स्वामि कही तुहि शरणन लेवों। हिंसक जानि त्यागि करि देवों॥
देवि कहा प्रभु आज्ञा जोई। माथे धारि करब में सोई॥८॥
दोहा॰ भगवत की माया प्रबल, जीवन दियो भुलाय।
कृपा करैं गुरु देव जब, तब सुधि प्रगटै आय॥६॥
अबलों निज अधिकार सों, भलो बुरो जो कीन।
ताहि क्षमा कीजै प्रभू, चरण शरण तब लीन॥७॥
सो॰-सन्तन सरल स्वभाव। पर दुखते दुःखित सदा।
देषि देवि को भाव। अभयहस्त शिरपर दियो॥
चौ॰-तुलसी मालकंठ पहिराई। मंत्रराज दियो श्रवण सुनाई॥
उर्द्ध पुण्ड माथे पर दियऊ। शंख चक्र अंकित भुज कियऊ॥
हरि जनकी दासी कहि नामा। दिय पांचो संस्कार ललामा॥
अरु उपदेश विविध विधि कीना। भजन करन निष्ठा कहि दीना॥

श्रीहरि गुरु संतन को सेवो । निज जनको हरि भक्ति ज्ञ देवो ॥
ए जो जीव अहैं संसारी । हरि भक्ति दै करो सुखारी ॥३॥
स्वामि बचन दृढ़ हियमें धारी । देवि ग्राम को तुरत पधारि ॥
रह्यो गांव को मुखिया जोई । जाय कही तू हरि जन होई ॥
आज भईमें श्रीहरि व्यासी । हरि के चरण अनन्य उपासी ॥
मैं गुरू हरि व्यास ही कीना । तबते पायो जन्म नवीना ॥५॥
तुम सब चलहु होउ तिन दासा । नाहीं अबहीं करूँ विनासा ॥
यह सुनिके सब जन घबराये । श्रीहरिव्यासशरण महँ आये॥६॥
नर नारी जे रहे दुखारी । श्रीस्वामी की शरण पुकारी ॥
श्रीस्वामी सब को शिष कीना । अभय हस्त मस्तक पर दीना॥७॥
सबकों श्रीहरि भक्ति दृढ़ाई । सेवा रीत हु दई सिषाई ॥
घर घर मंगल बजी बधाई । जबते गुरू हरिव्यास ही पाई॥८॥
दो०-तिहि चट थावर ग्राम में, धर्म सहाय सुनाम ।
बिप्र एक तिहि धाम तिय, रमा सु देवि ललाम ॥८॥
सोरठा—भक्ति परायण होई । नारि पुरुष नित हर्ष युत ॥
राधा मोहन दोई । जपत हृदय अनुराग भरि ॥
चौ०-पांच पुत्र तिनके छवि वन्ता । परम प्रीत सबकी भगवन्ता ॥
मुक्ताराम छोट सबहीते । परम भागवत जन्मत हीते ॥१॥
सम्वत चौदह शत अठतीसा । माघ मास पून्यों को दिवसा ॥
मध्य दिवस में प्रगटे आई । मघा नक्षत्र चरण त्रैजाई॥२॥
सरल स्वभाव शान्त नित रहहीं । संतन देखि महामुद भरहीं ॥
वृथा वचन मुखते नाहिं भाषैं । सदा एकांत रहन अभिलाषैं॥३॥
एक समय सो विप्र प्रवीना । स्वामी पधरावनि घर कीना ॥
सब सन्तन हित करी रसोई । सन्त प्रसाद पाय मुद होई॥४॥

मुक्ताराम स्वामि के चरणा। लगे आय भव भयदुख हरणा॥
स्वामिहि देखि महामुद भयऊ। पूर्व सुकृत तब जागत भयऊ॥५॥
स्वामिहुँ लखिमनकियोविचारा। यह बालक हरि भक्त उदारा॥
होवेगो अतिही परतापी। जगमें निज वंशावलि थापी॥६॥
स्वामी संग संत ले सबहीं। निज आश्रम पर गवने तबहीं॥
धर्म सहाय भेट बहुदीने। सबको स्वागत बहुविधि कीने॥७॥
सबको आश्रम लगि पहुँचाये। स्वामिहिं पूछि मुदित घर आये॥
जबते स्वामी दर्शन पावा। मुक्ताराम हिये मुद छावा॥८॥

दो०-मनमें करत विचार नित, कब होवों हरिदास॥
मोहिं आपनों जानिके, अपनावैं हरि व्यास॥९॥

निसिदिन मन यह करतविचारा। कैसे छूटै गो संसारा॥
स्वामि शरण गहि हरिपद सेवों। मात पिता घरको तजि देवों॥१॥
एक दिवस तब निश्चय कीना। हरिको भजन सार दृढ़ चीना॥
मात पितासों कह्यो बुझाई। स्वामिशरण मुहिं देहु कराई॥२॥
स्वामी जीकी सेवा करिहौं। अपनों जन्म सफलमन धरिहौं॥
मात पिता सुत धन परिवारा। राज पाट हय गज मतवारा॥
बिन हरि भजन संग नहिं जाई। कोटि भांति कोउ करै उपाई॥
जब लगि हरिहिं भजैनहिं कोई। आवागमन निवृत्त न होई॥४॥
मात पिता सुनि सुतकी वानी। भक्ति प्रभाव प्रेम रस सानी॥
प्रेम मगन ह्वै दोऊ भाषा। धन्य धन्य सुत तुव अभिलाषा॥
असकहि स्वामि पास दोउआये। सुतको स्वामि चरण लपटाये॥
बार बार बहु विनय उचारी। परे स्वामीके चरण मझारी॥६॥
नाथ याहि निज शरणहिं लीजै। अभय दान अब याको दीजै॥
तुम सर्वज्ञ नाथ सुत एहू। अपन जानि अब कीजै नेहू॥७॥

सदा याहि सेवामें लहिये। आज्ञा करत नाथ नित रहिये ॥
अस कहि विप्र मगन मन होई। तिया पुरुष गवने घर दोई ॥८॥
दो०-तब स्वामी पूछन लगे, कहो विप्र सुत बात।
बाल अवस्था तव अहै, क्यों छोड़े पितु मात ॥१०॥
कहि बालक अब आप हो, मात पिता गुरू मोर।
चरण शरण गहि लीजिये, बंधन दीजै छोर ॥११॥
जगमें मेरे एक हो, तुमहीं सर्वाधार।
और सबै जग झूठ है, यह दृढ़ कियो विचार ॥१२॥
नाथ मोहिं अब दीक्षा दीजै। हरिके चरण समर्पण कीजै ॥
देख भाव बालक को जब ही। स्वामी मुदित भये हिय तबहीं ॥१॥
तुलसी माल कण्ठ में दीना। शंख चक्र अंकित भुज कीना ॥
उर्द्ध पुण्ड मस्तक पै भयऊ। नाम मुकुंद देव कहि दयऊ ॥२॥
मन्त्रराज श्रवण में दीना। और मुकुन्द मन्त्र रसभीना ॥
द्वादश वर्ष अवस्था माहीं। ब्रह्मचर्य्य नैष्ठिक व्रत चाहीं ॥३॥
आये सकल त्यागि संसारा। मात पिता गृह धन परिवारा ॥
सम्वत चौदह शत पञ्चासा। द्वादशि शुक्ला माधवमासा ॥४॥
श्रीगुरू शरणागत भये आई। जगत प्रीत सब दई बहाई ॥
श्रीगुरू सेवामें चित दीना। तन मन काय समर्पण कीना ॥५॥
ब्रह्म मुहूरत में धरि ध्याना। प्रात समय उठि करि अस्नाना ॥
मंत्रराज जपि निज कृतकरिकैं। मन क्रमवचनउमंगहियभरिकैं ॥६॥
श्रीगुरू कों अस्नान करावैं। बस्त्र धोय सामग्री लावैं ॥
अतिहि प्रीतिसों जलभरिलावैं। गुरू प्रसादि प्रेम सों पावैं ॥७॥
सेवा चरण कमल की करहीं। गुरूकी कृपादृष्टि चित धरहीं ॥
विन गुरूजगत और नहिंजानैं। सर्वाधार गुरू को मानैं ॥८॥

दो०-इहि विधि औरहु जन बहुत, करैं गुरू की सेव ।
गुरू ब्रह्मा गुरू विष्णु है, गुरू महेश्वर देव ॥१३॥
जब स्वामी तहँते अनत, चलवे भये तयार ।
धर्म सहाय सु नारि युत, संग पुत्र लै चार ॥१४॥
आय स्वामि के चरण में, सबहिं समर्पण कीन ।
हर्षित है तब सबन को, संस्कार प्रभु दीन ॥१५॥
कंठी तिलक भुजशंखवर, चक्रांकित करि दीन ।
उर्द्ध पुण्ड शिर पर दिये, नाम इष्ट आधीन ॥१६॥
स्वामि कही घरमें रहो, भजन करौ हर्षाय ।
हरिके भजन बिना समय, एकहु पल जनि जाय ॥१७॥

मात पिता तब कहिकर जोरी । चरण कमल महँ बहुत निहारी ॥
यह बालक आपहिको स्वामी । बहुत कहौं कहा अंतर्यामी ॥
धन्य धन्य हमरो कुल भयऊ । जो अस सुतमो कहं प्रभुदयऊ ॥
जन्म हमार सुफल करिदीना । राधालाल शरण इन लीना ॥२॥
यह अब नाथ संगमें रहि है । चरण कमल की सेवा करि है ॥
नाथ आप मानुष तनु नाहीं । साक्षात हरी पार्षद आहीं ॥३॥
लोक पवित्र करन के काजा । जगमें प्रगट भये महाराजा ॥
सुनि अस विनय विप्रकीसोई । स्वामी अति प्रसन्न मन होई॥४॥
बोले तुम सम धन्य न कोई । जासु वंशमें हरि जन होई ॥
सो कुल परम पवित्र कहावे । पितर स्वर्गते हरिपुर जावे ॥५॥
जननी कृत्य कृत्य है जाई । धन्य धन्य सो भूमि सुहाई ॥
जौन देश जिहि कुल बड़भागी । कृष्णभक्त प्रगटै अनुरागी ॥६॥
यथा श्लोक-कुलं पवित्रं जननी कृतार्था,वसुंधरा भाग्यवतीच धन्या।
स्वर्गेऽपि तेषां पितरोपि धन्या,येषां कुलै वैष्णव नाम धेयम॥१॥

याकी चिन्ता तुम जनि करहू । गृह बसि नित हरि सुमिरन करहू॥
असकहि स्वामि ज्ञान तिहि दीना। जान भवन को आज्ञा कीना॥७॥
कछुक समय तहँ करि विश्रामा। स्वामि चले तब दूसर ग्रामा ॥
देवि चली स्वामी के साथा । सेवा करहीं होइ सनाथा ॥८॥
दोहा—सन्त समाज प्रयाग संग, पावन जगके हेत ।
ग्राम ग्राम सब देश में, भक्ति सबन कों देत ॥१८॥
जो जन आवैं शरण में, ताहि अभय करि लेहिं ।
प्रेम समुद्र अगाध में, मगन सदा करि देहिं ॥१९॥
श्री मुकुन्द देव स्वामी की । सकल सेव करहीं रुचि हीकी ॥
एक समय गुरु सेवा माँही ।भये मगन तनकी सुधि नाँही॥१॥
श्रद्धा शील शान्त हिय भाये । देखि स्वामि अति ही हर्षाये ॥
प्रेम दान देवे के काजा । है प्रसन्न बोले महाराजा ॥२॥
मात पिता जो तैं तजि दीन्हा । हमरे सङ्ग कहा सुख चीन्हा ॥
मात पिता बहु लालन करते ।तुहिं देखे बिन कल नहिं परते ॥३॥
सुनिअस स्वामि चरणगहिलीना। बोले बचन होइ अति दीना ॥
नाथ पिता माता अरु भ्राता ।गुरु भगवान मित्र सुख दाता ॥४॥
आप बिना कोई नहि मोरे । नाथ चरण गहि करूं निहोरे ॥
मात पिता जग माँहि फँसावैं । गुरु कृपाकरि हरिहिं मिलावैं॥५॥
मात पिता सुत धन जन गेहा । हय गज रथ नारी अरु देहा ॥
सब निज निज स्वारथ को चाँहैं। अन्त समयको संग न जाहैं ॥६॥
सुनि अस विनय प्रेम रस भीनी। श्रीगुरुदेव कृपा तब कीनी ॥
[illegible] पा करें गुरु देवा । जानैं तबहिं सहज सब भेवा ॥७॥
है प्रसन्न बोले तब बानी ।परम रहस्य मय अतिरस सानी॥
अस कहि गये चरण लपटाई । त्राहि त्राहि अब लेहु बचाई॥८॥

दोहा-अभय हस्त शिर पर दियो, बहु भाँति पुचकारि ।
रोवै जनि अब कहत हौं, परम तत्व निरधारि ॥२०॥
देखो जगमें जीव जे, सखी रूप सब जान ।
दिव्य दृष्टि देवै गुरु, तबही होवै ज्ञान ॥२१॥
हम तुम दोउ निकुंज के, सखी रूप अवतार ।
हरिप्रिया मम नाम तुव, मणि मंजरि वपुधार ॥२२॥

श्रीनिकुञ्ज में जो रंग देवी । तिन परिकर के हैं दोउ सेवी ॥
तिन आज्ञा जगमें दोउ आये । जीवन कुशल करन मन भाये॥१॥
जितने जीव अहैं जग माहीं । सखी स्वरूप सबै ते आहीं ॥
पद्म पुराण माहिं यह गावा । खण्ड पताल प्रगट दरशावा॥२॥

पद्म पुराणे पाताल खण्डे वृन्दावन महात्म्ये अध्याय ॥८॥ श्लोक ॥४७॥

गोप्यै कथा वृतस्तत्र परि क्रीडति सर्वदा ।
गोविन्द एव पुरुषो ब्रह्माद्या स्त्रिय एव च ॥

जगमें जितने जीव अनन्ता । ब्रह्मासे चींटी पर यन्ता ॥
सबहीं जीव रूप हैं वामा । पुरुष एक सुन्दर घनश्यामा॥३॥
ताते सब निकुञ्ज ते आये । निज निज विषय भोग मन भाये॥
अन्त समय जावैं तिहि ठामा । रहैं जहां राधा घनश्यामा ॥४॥
यहां आये भूल्यो निज रूपा । बारम्बार परै भव कूपा ॥
यह संसार खेल प्रिय पीको । माया बस सूझै नहिं जीको॥५॥
ताते जन्म मरण बहु पावै । स्वर्ग पाताल नरक हूँ जावै ॥
योनि अनेकन फिरै भुलाना । माया विवश रह्यो नहिं ज्ञाना॥६॥
जब हरि कृपा होय जा ऊपर । तब गुरुदेव मिलैं तेहि भूपर ॥
हरिकी भक्ति करैं उपदेशा । रहै शंक को नहि लवलेशा॥७॥
तब निज सखी रूप पहिचानै । कुञ्ज महल सेवा मन ठानै ॥

जहां गये जगफिरि नहिं आवै। ऐसो धाम अचल सो पावै।।८।।
सखी अनन्त जहां नित राजैं। प्रीतम प्रिया सेवके काजैं।।
श्रीमत निम्बारक भगवाना। यह बात है कियो बखाना।।९।।
निज स्वभाव सब दोष विनाशी। अशैष कल्याण गुणैक राशी।।
व्यूहन को अंगी घनश्यामा। ध्याऊँ कमल नयन सुखधामा।।१०।

दोहा–बाम अंग वृषभानुजा, अनु सौभग समरूप।
रहैं विराजति मुद सहित, शोभा अमित अनूप।।२३।।
सखी सहस्त्रैः सेवहीं, सदा हिये युत भाव।
सकल इष्ट कामन प्रदा, सुमरू शीश नवाय।।२४।।

रहैं सखी नित सेव मझारा। तहाँ पुरुष को नहिं अधिकारा।।
रङ्ग सुदेवी ललित विशाषा। चंपलता चित्रा मुदभाषा।।१।।
तुङ्ग विद्या इन्दु लेखा हेरी। आठ प्रधान सखी तहँ केरी।।
आठ सखिन के परिकर माहीं। जब लगि आश्रित होवैं नाहीं।।२।
सखी भाव हिय में नहिं लावै। तबलों तहां प्रवेश न पावै।।
बिन प्रवेश नहि जग निरवारा। कोटिन भांति करै उपचारा।।३।।
स्यामाश्याम निकुञ्ज विहारी। सङ्ग अनन्त सखी रुचिकारी।।
रास विलास और बहु लीला। करहिं सदा निजरुचि अनुकूला।।४।
इनहीं की इच्छा से जगमें। खेल होत जल थल अरु नभमें।।
इनकी इच्छा शक्ति प्रधाना। रचें अनेक ब्रह्माण्ड महाना।।५।।
जीव मात्र में बल बुधि जेती। ज्ञान स्वभाव पराक्रम तेती।।
इनहीं की इच्छा से होई। और अन्यथा करै न कोई।।६।।
एही सकल जगत के त्राता। एक प्रान अरु हैं द्वै गाता।।
ए दोउ युगल किशोर किशोरी। कृपा करैं जा जनकी ओरी।।७।।
तबहीं सो तिनको पहिचानै। सखी रूप निजको तब जानै।।

सखी भाव विन चितमें धारी। नहीं युगल सेवा अधिकारी॥८॥
दोहा—निज स्वरूप जानौ सखी, राखौ भाव उर माँय।
प्यारी प्रीतम की सदा, टहल करौं मन भाय॥२५॥
आये नित्य विहार से, पहुँचे नित्य विहार।
नित्य विहारी केलि को, सदा रहैं उर धार॥२६॥
चलौ चलौ निज देश को, अपनो देश निकुञ्ज।
नित्य विहारी की जहाँ, केलि होत रस पुञ्ज॥२७॥
श्रीरंग देवी चरण को, सदा धरौ उर ध्यान।
तिनकी कृपा सुदृष्टि ते, पावो पद सुख दान॥२८॥
कहूं मुकुन्द तोहि समझाई। करो ध्यान नित चित्त लगाई॥
एक पलक भूलन नहिं पावै। छिन छिन प्रियालाल मन भावै॥१॥
नाम रूप लीला अरु धामा। त्यागै नहीं आठ हूँ यामा॥
रङ्गदेवि निज सखि सँग लीनें। रङ्ग भवन में रुचि सुख भीनें॥२॥
गौर श्याम कों लाड लडावैं। कबहूँ फूल शृंगार करावैं॥
फूलन की शय्या मन हारी। पधरावैं हितसौं पिय प्यारी॥३॥
कबहूँ हितसौं होरी खिलावैं। कबहूँ फूल डोल पधरावैं॥
कबहूँ जल विहार करवावैं। कबहूँ व्यञ्जन विविध बनावैं॥४॥
निज करसौं भोजन करवावैं। रचि रचि रुचिर सुवीरी खवावैं॥
कबहूँ हास विलास करावैं। आनन्द की नित नदी बहावैं॥५॥
या विधि विविध विलास करावैं। आठ पहर या भांति वितावैं॥
चरण कमल रङ्ग देवीजी के। मन वृत्ति राखो विधि नीके॥६॥
तिन परिकर की सखि जे आहीं। तिनकी संगति करौ सदाहीं॥
जे निकुञ्ज के अहैं उपासी। पिय प्यारी के केलि विलासी॥७॥
ते नित तिनकी बात चलावै। सेवामें मन सदा लगावै॥

जग दुर्गन्ध तिनहिं नहिं भावैं । सरल स्वभाव हृदय सरसावैं॥ ८॥
दो०–गौर श्याम की माधुरी, मगन रहैं दिन रैन ।
महल टहल कीने बिना, हिये परै नहिं चैन ॥ २९॥
श्रीरङ्ग देवी के सदा, सखी रहैं निज संग ।
प्रेम सहित सेवा करैं, भरी उमंग अंग अंग ॥ ३०॥
या प्रकार आचार्य वर, बोले करि उपदेश ।
और सुनहु मनमें गुनहु, रहै शंक नहिं लेश ॥ ३१॥
परम धाम यह है सुख सारा । परम तत्व दम्पति निरधारा ॥
राधाकृष्ण ब्रह्म परि मानो । प्रकृती अरु पुरुषोत्तम जानो ॥ १॥

श्लोक राधाकृष्णा पर ब्रह्म, प्रकृतिः पुरुषोत्तमः ।
ध्यायते योगिभिर्नित्यं, राधाकृष्णात्मकं जगत् ॥ १॥
राधां कृष्ण स्वरूपां वै, कृष्णं राधा स्वरूपिणम् ।
उभौतौ प्रेम सम्बन्धौ, न कामेन कदा चन ॥ २॥
परस्पर मनो वृत्ति, स्वातंत्रेनैव जायते ।
नाऽभिन्नं नापिकामेन, सहज प्रेम विवर्धनम् ॥ ३॥ (स०ध०)

प्रीतम प्रिया सखिन के संगा । प्रेम मगन रह सदा उमंगा ॥
प्रातकाल उठि धरि सखि भावा । जाय मिलि निज रूप सुहावा॥ २॥
या पद को है यही उपाई । अपर मार्ग से तहाँ न जाई ॥
अपनो जो निज रूप कहाई । सखी भावसो प्राप्त कराई ॥ ३॥
सब जीवन के हैं द्वै रूपा । एक यहां इक वहां अनूपा ॥
यहाँ प्रकृति बाँधि जगत भ्रमावैं । वहाँ प्यारी पिय नित्य लड़ावैं॥ ४॥
जब हरि गुरु की कृपा सु होई । सखी भाव जानै तब सोई ॥
सखी भावते नित्य लड़ावै । पिय प्यारी हियमहँ नित ध्यावै॥ ५
तब तजि सकल प्रकृति को भावा । दिव्य देह धरि तहाँ सिधावा ॥

अपने रूप माहिं होइ लीना ।फिर नहिं होय प्रकृति आधीना॥६
कृपा करै जब श्रीरङ्ग देवी । प्रीतम प्रिया मिलै तब सेवी ॥
परम तत्व यह गुप्त बखाना । तोको जब अधिकारी जाना ॥७॥
याको मनन करौ दिनराती । पिय प्यारी लडवो बहु भाँती ॥
जगमें कमल पत्र वत रहनो ।मन वृत्ति रङ्ग भवन दिशि चहनो॥८

दो०-इमिगुरुमुखते वचनसुनि, प्रेम मगन हर्षाय ।
बारबार पद कमल में, मस्तक दियो लगाय ॥३२॥
जैसी स्वामि कृपा करी, मोते कही न जाय ।
मोहि कृतारथ कीन प्रभु, दुविधा दई नशाय ॥३३॥
अब इक विनती और है, पुनि पुनि लेहुँ बलाय ।
पिय प्यारी के दरश प्रभु, दीजै मोहिं कराय ॥३४॥
ऐसे कहि गुरु सेव में, तन मन दियो रमाय ।
नित निकुञ्ज की केलिकों, ध्यावै चित्त लगाय ॥३५॥
एक दिवस करते रहे, पिय प्यारी को ध्यान ।
चित्त वृत्ति अनन्तर लगी, नहीं देहको भान ॥३६॥
ध्यान माहिं देख्यो तबै, पिय प्यारी को रूप ।
कोटि सूर्य्य शशि लाजहीं, शोभा देखि अनूप ॥३७॥
एक छिनक महँ है गये, गुप्त युगल सुकमार ।
ऊँचे स्वर रोवन लगे, हा हा कार पुकार ॥३८॥
सुनि स्वामी आये तुरत, लीनो हिये लगाय ।
कह्यो काहे रोवै जु अब, मोते कहै बुझाय ॥३९॥
सुनि गुरु मुख ते बचन वर, चरनन शीश लगाय ।
मोको नाथ अनाथ लखि, आप लियो अपनाय ॥४०॥
करत ध्यान मो हीय में, आये राधा लाल ।

छिनक एक में छिपि गये, प्रगट दिखावो हाल ॥४१॥
कहि स्वामी अभिनहिं अधिकारी। पहिले करु सेवा चितधारी ॥
जाके दश पैड़ी अति दृढ़ है। बिन अधिकार कौन तहँ चढ़िहै॥
पहिले रसिक जनन कुं सेवै। दूजी दया हिये धरि लेवै ॥
तीजी धर्म सु निष्ठा गुनि है। चौथी कथा अतृप्त ह्वै सुनिहै॥२॥
पञ्चमि पद पंकज अनुरागै। षष्ठी रूप अधिकता पागै ॥
सप्तमि प्रेम हिये विरधावै। अष्टमि रूप ध्यान गुन गावै॥३
नवमी निश्चय दृढ़ता गहिये। दशमी रसकी सरिता वहिये ॥
या अनुक्रम करि जे अनुसरहीं। शनै शनै जगते निरवरहीं॥४॥
परम धाम को सो अधिकारी। अस साधन जो कर उरधारी॥
हृदय शुद्ध जबलौं नहिं होई। तबलौं दरश पावै नहिं कोई॥५॥
पहिले क्रोध मोह मद त्यागै। मान बड़ाई ते नित भागै ॥
स्वर्ग और अपवर्ग न चाहै। हानि लाभसे वे परवाहै ॥६॥
शोक हर्ष हियमें नहि लावै। निश दिन पिय प्यारी कों ध्यावै॥
संशय मनमें करै न कोई। अवशि कृपा वाही पर होई॥७॥
स्वप्नहू में कछु वस्तुन चाहै। पुरुष बचन सुनि हिय न दाहै ॥
क्षमा शील सन्तोष हि राखै। कटुक बचन मुखतेनहिं भाषै॥८
जीव मात्र ते द्रोह न करहीं। पर उपकार सदा चित धरहीं ॥
निन्दा अस्तुति सम करि जानै। शत्रु मित्र दोउ एक समानै॥९॥
एक पलक हरि भजन न भूलै। भजन बिना पल युग समतूलै ॥
यथा मीन जल बिन अकुलावै। बिछुरत जलते प्रान गमावै॥१०॥
ऐसी मति होवगी जबही। दरशन को अधिकारी तबही॥
सुनि गुरु बचन हिये अकुलाई। रोवन लगे चरन लपटाई॥११॥
नाथ बात सब दूरि बहावौ। मोहिं दरश अब वेगि करावौ॥

ना तरु अबहि प्राण परि हरिहौं। बिनादरश अब धीरन धरिहौं ।१२

दो०–असकहि धरणी में परे, तनकी सुधि कछु नांहि।
स्वामी देखि चकित भये, शोचत हैं मन माहिं ॥४२॥
धन्य धन्य है याही को, जो ऐसी अभिलाष ।
बिना दरश जीवै नहीं, जो समझाऊँ लाष ॥४३॥
यहविचारि तब हाथ गहि, गोद लिये बैठारि ।
कहि पिय प्यारी खड़े हैं, देखौ नेत्र उघारि ॥४४॥

असम्रुनि अचकि खोल जब नैना। पिय प्यारी आगे छवि ऐना ॥
निरखे नैन प्रेम रस पागे। हीयो उमगि भरयो अनुरागे॥१॥
तब स्वामी लखि के यह कीना। हस्त कमल मस्तक पर दीना॥
तबही युगल दिये गर बाँहीं। अष्टसखी संग सदा उर माँहीं॥२॥
देखि मगन भये अति हिय माँहीं। दिवस निशा रविशशि तब नाँहीं॥
दिव्य प्रकाश चहुँ दिशि छायो। सो सुख कोटिन जातन गायो॥३
नखते शिख लों रूप निहारा। उमड्यो हिय आनन्द अपारा॥
देखि युगल छवि तन पुलकायो। रोम रोम आनन्द समायो॥४॥
श्रीगुरु को देखे सखि रूपा। श्रीहरिप्रिया अति नाम अनूपा॥
अपनहुँ को सखि रूप निहारा। मणि मंजरि सो नाम उदारा॥५॥
उभय घरी लगि तनु सुधि नाहीं। गौर श्याम लखि हिय हर्षाहीं ॥
आचारज शिरते कर जब ही। लियें उठाय सुधि आई तबही॥६॥
गुरू के अंक अपन को देखा। नहिं सखि पिय प्यारी तहँ पेखा॥
भये विकल जस जल बिन मीना। स्वामी देखि कृपा तब कीना॥७॥
श्री सर्वेश्वरजी की माला। तिहि गर डारि दई तत काला॥
परसि मालथिर चित जबभयऊ। चरण कमल गुरके शिर नयऊ॥८॥

दो०—धन्य धन्य प्रभु आपकी, महिमा श्री गुरु देव ।
लगन लगाय सेवे जवै, तबही पावे भेव ॥४५॥
प्रभु समर्थ सर्वज्ञ हो, महिमा अमित अपार ।
जीवन के उद्धार हित, लीनो जग अवतार ॥४६॥
हरी हरी को रूप है, प्रिया रूप है व्यास ।
श्रीहरिप्रिय मिलि के दोउ, वपुधारे हरिव्यास ॥४७॥
आपहि हरि को रूप हैं, आपहि प्रिया स्वरूप ।
नित निकुंज राजत रहो, श्रीहरि प्रिया अनूप ॥४८॥

जै जै श्रीगुरुदेव कृपाला । मोहि नाथ अब कियो निहाला ॥
जो जन नाथ शरण तव आवे । निश्चय पिय प्यारी को पावे ॥१॥
बिन तव चरन शरण जग माहीं । युगल भजन अधिकारी नाहीं ॥
जब हरि कृपा करें जाही पर । हरि कुल में जन्मै भू ऊपर ॥२॥
मानुष देह मिले सुख देनी । हरि प्राप्ती की सुदृढ़ निशैनी ॥
योग यज्ञ जप तप मख दाना । तीरथ ध्यान ज्ञान विज्ञाना ॥३॥
काशी मरै अनल तन जारे । पुनी हिमालय में जा गारे ॥
स्वर्ग नर्क पातालहु जावे । नवधा करि बैकुण्ठहु पावे ॥४॥
अर्थ धर्म कामादिक जेते । चार प्रकार मुक्ति के हेते ॥
एते सकल सुलभ ह्वै जावे । बिन तव शरण निकुञ्ज न पावे ॥५
जब लगि हरी व्यास गुरु शरणा । गहै नहीं भव भय दुख हरणा ॥
तब लगि धाम निकुञ्ज न पावे । प्रीतम प्रिया नाहि अपनावे ॥६॥
अब आगे जे सखि जग आई । आचारज वपु धरि प्रगटाई ॥
तिनकी चरण शरण जो आवे । प्यारी पिय रहजहि सो पावे ॥७॥
मैं कृत कृत्य भयउ अब स्वामी । दरशाये वृन्दावन धामी ॥
अब इतनी करुणा प्रभु कीजे । एक और अभिलाष पुरीजे ॥८॥

चाहे जहाँ रहूँ जिहि गामा । चाहे वृन्दाविपिन ललामा ॥
नित निकुञ्ज की केलि सुखारी । देखत रहूँ सदा मन हारी ॥९॥
सुनि स्वामी कहि ऐसेइ होई । निशिदिन केलि मगन रहु जोई ॥
यह रहस्य अति गुप्त महाना । बिन अधिकारिकरौ न बखाना ॥१०

दो०—यहि विधि नित गुरु सेवमें, रहैं मगन दिन रैन ।
कुञ्ज केलि के रहस्य कों, रहैं विलोकत नैन ॥४९॥
श्री स्वामी हरि व्यास जू, जाहि देश को जाय ।
तिनकी सेवा में सबै, रहैं शिष्य समुदाय ॥५०॥
बहुत देश हरिभक्ति को, करि प्रचार रसिकेश ।
सहस्र शिष्य संग में लिए, आये मथुरा देश ॥५१॥
ध्रुव टीला के पास ही, श्री यमुना तट भाय ।
जहाँ भजन किय युगलको, नारद मुनि हर्षाय ॥५२॥
नारद टीला तबहि ते, भो प्रसिद्ध जग माहिं ।
तिनके अघ सब नाशहीं, दरश करन जे जाहिं ॥५३॥
श्रीकेशो काश्मीरि जू, भजन कियो तहँ आय ।
यन्त्र तोरि जीते सकल, यवनन के समुदाय ॥५४॥
बहुरि तहां श्री भट्टजु, भजन कियो हर्षाय ।
आय तहाँ हरि व्यास जु, शिष्य लिये समुदाय ॥५५॥

यहि प्रकार स्वामी हरिव्यासा । मथुरा माहीं किये निवासा ॥
बहु देशन ते जन बहु आवे । स्वामि दरश करि मुद है जावे ॥१
है स्वामी को अमित चरित्रा । जिहि सुनि होवै हृदय पवित्रा ॥
सो मैं सकल नाहिं यहां गावा । कछु संक्षेप माहिं दरशावा ॥२॥
श्रीमुकुन्द देवजु को चरिता । ताकी यहां बहाई सरिता ॥
आर चरित बहु ग्रन्थम माहीं । प्रगट प्रभाव सुजस जग माहीं ॥३॥

इक शत चालिस को वय भयऊ। स्वामि विचारत मनमें भयऊ॥
सम्वत शत चौदह जु नवासी। पूनम माघ मास सुखरासी॥४॥
जिहिं कारज लगि हम यहँ आये। सोतो सवै भये मन भाये॥
पिय प्यारी की आज्ञा जोई। सो सब कियो रह्यो नहिं कोई॥५
अब निकुञ्ज को करौं पयाना। यहां रहन अब नहिं मनमाना॥
अस विचारि सब शिष्य बुलाई। उपदेशन लागे सुखदाई॥६॥
सोभुराम अरु बोहित देवा। मदन गोपाल, बाहुबल देवा॥
परशुराम, गोपाल, पुनीता। हृषिकेश, माधव, शुभ चीता॥७॥
केशव, लपर गुपाल, मुकुन्दा। उद्धवदेव, सकल सानन्दा॥
ये द्वादश हैं शिष्य प्रधाना। स्वामी काज करहिं मनमाना॥८॥

दो०—आये श्रीगुरु दरश हित, औरहु शिष्य अनन्त।
रहे जहाँ जिहि देश जे, धाये सुनत तुरन्त॥५६॥
प्रभु दरशन करके सबै, सुखी भये तिहिं काल।
भीर देखिके स्वामि तब, बोले बचन रसाल॥५७॥

श्यामाश्याम अहर निश जपनो। या जगमें कोई नहिं अपनो॥
कै हरि कै गुरु कै हरि दासा। और काहु की करहु न आसा॥१॥
बड़े भाग मानुष तन पायो। वेद पुराण उपनिषद गायो॥
सो तनु पाय विषय सुख भावा। तो निष्फल यह जन्म गँवावा॥२
यह तन जिमि मगमें धर्मालै। करि विश्राम पथिक पुनि चालै॥
तिनमें महा मूढ़ है सोई। मानि लेय अपनों घर जोई॥३॥
सो उत्तम जो निज घर आवै। मगमें कहुँ आशक्ति न लावै॥
जब निज गेह पहुँचि जो जावै। सोइ परम प्रवीन कहावै॥४॥
सुखी होय घर करै निवासा। पराधीनता होय निवासा॥
मगमें दुख सुख जो कछु पावा। निज गृह लहि सो सबै भुलावा॥५

जबते जीव जगत महिं आयो। निज घर नित्य विहार भुलायो॥
माया मोह जाल लपटायो। नश्वर सुख सों नेह लगायो॥६॥
मात पिता सुत भ्राता जेते। कोउन आपन हैं इनमें ते।
इन सबकों आपन करि माना। निज स्वरूप को गयो भुलाना॥७॥
यह जग काल व्याल को खायो। कहौ कौन यामें सचुपायो॥
समुझे नाहिं सबै विनशाई। देखत नैन अंध ह्वै जाई॥८॥
दो०—तिनमें उत्तम सोई है, जो त्यागै सब मोह।
आगे कों चलतो रहै, छोड़ सबन ते द्रोह॥५८॥
स्वर्ग पातालरु भूमि तल, देव लोक रवि लोक।
ब्रह्म भवन अलका पुरी, जितने लोका लोक॥५९॥
सबै अन्त में होयँ विनाशी। नित्य विहार एक अविनाशी॥
जबलों तहाँ पहुँचि नाहिं जावै। तबलों सुख यथेष्ट नहिं पावै॥१॥
सबहीं लोक अहैं धर्माले। नित्य विहार आपनो आले॥
ताके आगे राह नहीं है। गीता माही आप कही है॥२॥
ताते नित्य विहार हि सेवो। जन्म मरण को भय तजि देवो॥
अग्र वर्तिनी श्रीरंगदेवी। अपने परिकर की हैं सेवी॥३॥
प्रीतम प्रिया ध्यान नित कीजै। महल टहल सेवा चित दीजै॥
सखी भावको नित्य विचारो। एकपलक अन्तर जिनपारो॥४
मंगल आरति शयन पर्यंता। युगल चन्द की केलि अनन्ता॥
अष्ट पहर की जो है सेवा। महावाणि में सो सब भेवा॥५॥
अष्ट पहर की जो विधि जैसी। सो सब तहाँ कही है तैसी॥
सेवा सुख नितकी सै सेवा। सुख उत्साह मासको भेवा॥६॥
सुरत दम्पती सेज विहारा। सहज स्वभाविक नित्य विहारा॥
सुख सिद्धान्त पीय प्यारी को। धामी धाम महातम नीको॥७॥

ताकी रीति नित्य अनुसरियो । कुञ्ज केलि को चितवन करियो॥
और जीव जो शरण मझारी । आवै जो जैसो अधिकारी ॥८॥
ताको तैसी शिक्षा कीजै । पात्र भाव लखि सेवा दीजै ॥
जाको मन निर्विषय विकारा ।कुञ्ज केलि को तिहि अधिकारा॥९
मन जब लगि निर्विषय न होवै। दास भावते दम्पति जोवै ॥
शुद्ध भये पर दासी भावा । सेवै सो दम्पति पदपावा॥१०॥
दो०—और कछुक संक्षेप में, कहूँ सबहिं उपदेश ।
जाके धारण किये ते, विनशै सकल कलेश ॥६०॥
जो दम्पति के शरणे आवै । सो अन्याश्रय सब छिटकावै ॥
विधिनिषेध के जेते धर्मा । तिनको त्यागि रहा निष्कर्मा॥१॥
झूठ क्रोध निन्दा तजि देनो । हरि प्रसाद बिन सुख नहिं लेनो॥
सब जीवन पर करुणा राखो । कबहुँ कठोर बचन नहिं भाखो॥२
मन माधुर्य रसमाहिं समोवो । घरी पहर पल वृथा न खोवो॥
सद्गुरु के मारग पगु धारो । हरि सद्गुरु बिच भेद न पारो ॥३॥
कबहुँ व्यर्थ बात जिन बोलो । हृदय तोलि मुख बाहिर खोलो॥
इष्ट भजन मन मिल रसरीती । करियो अवशि ताहिसों प्रीती॥४
आन देव को भक्त जो होई । तासों द्रोह करो जनि कोई ॥
सकल जीव हरि अन्तर्यामी । सो हरि भक्तन के अनुगामी॥५॥
सन्त चरण रज मस्तक धारो । बचन कहैं सो हृदय विचारो ॥
सन्तन की महिमा अतिभारी । जो समझै सो होय सुखारी॥६॥
परम पवित्र सन्तकी बानी । यह उरमें निश्चय करि जानो ॥
सन्तन में निष्ठा नहिं करि हो। तौ भवते कबहूँ नहिं तरि हो॥७
भक्त द्रोह हरिको नहिं भावा । भक्तमाल परगट दरशावा ॥
यथा लाभ सन्तोषहिं लहिये । काहू सों कछु वस्तु न चहिये॥८॥

दो०–परहित निरत निरंतरहिं, करम बचन मन काय।
पुरुषबचन अतिदुसहसुनि, मनमें नाहिं ठहराय ॥६१॥
विगत मान शीतल सदा, पर दुख द्रवित सुभाव।
अस्तुति निन्दा दोउन में, हर्ष शोक नहिं लाव ॥६२॥
परि हरि चिन्ता देह की, दुख सुख समकरि मान।
यहि मारग नित अनुसरौ, तौ अपनौ हित जान ॥६३॥
उत्सव बारह मासके, यथा शक्ति करि सोई।
व्रत एकादशि को सदा, करहु मगन मन होई ॥६४॥

सब में व्यापक हरिको जानौ। इष्ट प्रिया प्रीतम पहिचानौ ॥
राधाकृष्ण एक वपु होई। भूलहु भेद करौ जिन कोई ॥१॥
सदा अभय मधुर रस चाखो। सरल स्वभाव बचन मृदु भाखो॥
आचारज सेवो छल हीना। देह शुद्ध राखो हिय दीना ॥२॥
सदा एकान्त रहौ मन लाई। जन संसदि अरुची प्रगटाई ॥
कथा कीर्तन नित प्रति करहू। सत संगति चितमें नित धरहू॥ ३॥
इहि विधि बहुत श्रेय जे साधन। श्रद्धा सहित करो आराधन ॥
जे जन हरि की भक्ती चाई। तिनै शरण लेवौ हर्षाई ॥ ४॥
इहि विधि बहुत कीन उपदेशा। जाते जनकर मिटै कलेशा ॥
मास एक लगि सबहिं प्रबोधा। आगम निगम पुराणहिं सोधा॥५
चैत्र कृष्ण प्रतिपद जब आयो। घर घर फूल डोल सुख छायो ॥
संध्या समै डोल रचि नीको। तापै पधराये दम्पति को ॥६॥
दरश हेत बहु भीर सुहाई। स्वामी तहाँ बिराजे आई ॥
सुभग विमान एक तहँ आयो। चार सखी तापर छबिछायो॥७॥
कल कंठी शशि कलारु कमला। कंदर्पा अति सुन्दरि नवला ॥
श्री हरिव्यास देव के आगे। तहँ बिमान लाई अनुरागे ॥८॥

ताहि समय प्रभु पुष्प सिंहासन। बैठ रहे कीये पद्मासन ॥
सखि विमान निज तन प्रगटायो। श्रीहरि प्रिया नाम सुख दायो॥९
वय किशोर अतिही अभिरामा। गौर वर्ण सुन्दर सुखधामा ॥
जाय विमान चढ़ी सुखकारी। सखियन किय शृंगार सँवारी॥१०॥
दो०—पुष्प वृष्टि होवन लगी, चहुँ दिश जय जय कार।
सबके देखत ही गये, नित्य निकुञ्ज विहार ॥६५॥
प्राकृत तन अन्तर भयो, परम दिव्य वपुधार।
श्रीभट चरण प्रताप रज, पायो पद सुखसार ॥६६॥
साधुराम जू आदि दे, द्वादश शिष्य प्रधान।
हियमें सब उपदेश धरि, करन लगे गुन गान ॥६७॥
श्रीगुरु आज्ञा जो दई, सो सब लीनी धार।
परा भक्ति देते भये, जहाँ जैसो अधिकार ॥६८॥
तबते हरि व्यासी भये, सबके नाम प्रधान।
जे जन आये शरण में, ते पाये रज धानि ॥६९॥
नाम रूप लीला ललित, धाम चार अभिराम।
इनको जो जन नित गहे, सो पावै विश्राम ॥७०॥
हरि व्यासी हरिके भये, हरिके लाड लडाय।
जय जय श्रीहरिव्यासकी, नित नव हरि गुण गाय ॥७१॥
जा दिनते स्वामी हरिव्यासा। नित विहारमें किये निवासा ॥
श्रीमुकुन्द देवजू तबते। होय उदास रहैं नित सबते॥१॥
श्रीगुरूजी के ध्यान जु माहीं। मगन रहैं तन सुधि कछु नाहीं॥
सुन्दर यमुना पुलिन सुहाई। रहि एकान्त मौन मन लाई॥२॥
मानसि सेवा में लव लीना। अष्ट पहर रहे रसमें भीना ॥
प्रात समय उत्थापन करिकैं। मंगल आरति कर मुद भरिकैं॥३

करि स्नान श्रृङ्गार करावै । विविध भाँति के भोग लगावै ॥
राज भोग करि शयन करावै । मध्य दिवस जैनमो सुगावै ॥४
घरी चार दिन जब रहि जावै । करि उत्थापन भोग लगावै ॥
नव फूलन को करि श्रृङ्गारा । बन बिहार में करें विहारा ॥५॥
सन्ध्या आरति करि हुलसावैं । व्यारू करायरु शयन करावें ॥
घरी छ सातक माँहि जगावे । विविध भाँति रस रास रमावें ॥६
व्याह रचें गौनो करवावे । रंग महल में सेज बिछावे ॥
श्रीदूलह दुलहनि पौढ़ावे । निरखि नैन छवि हियें सिरावै ॥७
नित्य मानसी करैं अहारा । प्रिय प्यारी को नित्य विहारा ॥
जो जन तहँ दरशन कों आवै । करिके दरशन मगन ह्वै जावै ॥८
दो०—कर दण्डवत लोग सब, हाथ जोरि बहु भाँति ।
हमें शरण प्रभु लीजिये, हृदय दीजै शाँति ॥७२॥
बहुत दीनता देखिकैं, पात्र जान मन माँहि ।
चरण शरण में ग्रहण कर, दीक्षा देवै ताहि ॥७३॥
जैसो अधिकारी लखें, तैसी सेव बताय ।
मानसि सेवा सबन कों, उपदेशन हर्षाय ॥७४॥
भाव पांच जे भक्ति में, सब में सेव प्रधान ।
सब सेवा में मानसी, भक्त करत हैं ध्यान ॥७५॥
बिना मानसी सेव के, बाहर भावन होय ।
जब भीतर में पुष्ट हो, बाहर देखे सोय ॥७६॥
बाहर हरि पूजा करे, भीतर कीजै ध्यान ।
भीतर बाहर एक विधि, दोऊ लीजै जान ॥७७॥
भीतर सेवा के लिये, चहिये थल एकान्त ।
मन चञ्चल नहिं होय जहँ, रहै हृदे में शान्त ॥७८॥

दो०—नदी किनारे गिरि शिखर, बाग इक्को सो देखि।
भगवत जन विरमें जहाँ, बाढ़ै भजन विशेखि ॥७६॥
श्रीस्वामी में ऐसी शक्ती। दरश करत हिय उपजै भक्ती ॥
सुजन समूह शरण में आवै। सबकों हरिकी भक्ति दृढ़ावै॥१॥
उपदेशत पुनि याहि प्रकारा। जातें सब होवें भवपारा ॥
हरि गुरु सन्तन सों रह सांचो। निशिदिन प्रेम हिये में रांचो॥२॥
गहो टेक इक हृदय महाना। छूटै तन, नहिं छूटै ध्याना ॥
महाराज इहि भांति सिखावैं। जन्म मरण को भय विनशावैं॥३
हरि हरिजन की सेव बतावैं। जाते परम धाम मिलि जावैं ॥
जे ज शरण स्वामि के आये। सबै परम पद अविचल पाये ॥४
धाम रूप लीला अरु नामा। ए चारों दायक हरिधामा ॥
इन चारन की चरचा राखैं। व्यर्थ वार्ता भूलिन भाखैं ॥५॥
बहु जन शिष्य करैं गुरु सेवा। स्वामी निकट लखें सब भेवा ॥
सबकों कहैं भजो पिय प्यारी। मनमें ध्यान करो सुखकारी ॥६॥
सत्य सत्य मुखते नित भाखो। नाम रूप लीला रस चाखो ॥
महाराज के शिष्य घनेरे। भये विरक्त भक्त हरि केरे ॥७॥
तिनमें बड़ ब्रज भूषण देवा। सर्वस करि जानै गुरु देवा ॥
शान्त शील गम्भीर सुभाऊ। काहु सों नहिं करैं दुभाऊ ॥८॥
दो०—सब सद्गुण इनमें रहैं, थोरी बोलैं बात।
हरि सम्बन्धी छांड़िकें, और कछून सुहात ॥८०॥
श्रीगुरु सेवा में सदा, लगे रहैं हर्षाय।
जैसी रुचि देखें जबै, तैसी करैं बनाय ॥८१॥
गुरु भाई जेते रहै, सबको कर सन्मान।
अरु सब जन इनकों सदा, देवै अतिहि मान ॥८२॥

दो०—श्रीगुरु सेवा मानसी, रहैं अधिक लो लाय।
लेकर सुन्दर बीजना, ब्यारत ब्यार सुहाय ॥८३॥
स्नान करावै प्रीतिसों, अरु भोजन जल पान।
शयन समय पद कमलकी, सेव करैं मुदमान ॥८४॥
एक समय गुरु चरणकों, सेवत अति रुचि लीय।
श्रीगुरु शिक्षा देन कों, मन बिचार तब कीय ॥८५॥
श्रद्धा शीलस्वभाव लखि, शान्त सरल सब काल।
ह्वै प्रसन्न गुरु देव तब, बोले बचन रसाल ॥८६॥

ब्रज भूषण सुनि जो मैं भाखों। एकौ बात गुप्त नहीं राखों ॥
अपने इष्ट पुष्ट नित रहनो। निज स्वरूप कों,थिर ह्वै गहनो॥१
इष्ट प्रिया प्रीतम को जानो। अपनो रूप सखी पहचानों ॥
सखी भावते नित पिय प्यारी। लडवहु निशिवासर सुखकारी॥२
पिय प्यारी को खेल पसारा। निश्चय जानो यह संसारा ॥
सब श्रुति शास्त्र कियो निर्धारा। सब में हरि हरि सबते न्यारा॥३
हरि व्यापक सर्वत्र समानो। प्रेम ते प्रगट होय यह जानो ॥
श्रद्धा भक्ति हिय में आवै। प्रेम पंथ तब गुरु समझावै॥४॥
बाल कुमर पौंगँड वपुधारी। भक्तन हेत खेल बिस्तारी ॥
भक्तन हिये नेह सरसावैं। विमुखन हिये मोह उपजावैं॥५॥
हरिकी लीला अद्भुत जोहैं। देखि देखि ब्रह्मादिक मोहैं ॥
आन जीव की कहा चलावै। सुर मुनि सिद्ध सबै भरमावै॥६
है सब खेल हरिको ऐसो। जो समझै समझावै जैसो ॥
ब्रह्मा को जब खेल दिखायो। बाल बच्छ हरि रूप लखायो॥७॥
ऐसेहि सब जग हरिको रूपा। है अनेक रचि खेल अनूपा ॥
अन्त में एक हरी रह जावै। जगत हरी में जाय समावै॥८॥

दो०—हरि की लीला जानिकैं, भूलैं नहिं बुधिवान ।
मैं मेरी मूरख कहैं, होय विवश अज्ञान ॥८७॥
श्रद्धा करिके जीव जो, आवै शरण मझार ।
ताको हरि भक्ती मिलै, पावै निज अधिकार ॥८८॥

हरि की माया अद्भुत जोहैं । जनै जीव नहीं हम कोहैं ॥
श्रीहरि कृपा करैं जाही पर । सद्गुरु ढरैं तबहिं ताही पर ॥१॥
जब गुरु करुणा करि अपनावै । तब भगवत की भक्ति पावै ॥
भक्ति करत जब निर्मल होई । परा भक्ति प्रगटै रस भोई ॥२॥
भव बन्धन सब सहज नशावै । नित्य बिहार सदा मन लावै ॥
जो निकुञ्ज में श्री रंगदेवी । हम तुम सब परिकर की सेवी ॥३
मणि मञ्जरि है नाम हमारा । बिरज सखि है नाम तुमारा ॥
रंग महल में नित पिय प्यारी । सेवा अष्टयाम सुख कारी ॥४॥
सखी अनन्त तहाँ नित राजैं । श्यामाश्याम सेवके काजैं ॥
नित्य बिहार सदा मन लावो । थल एकान्त में ध्यान लगावो ॥५
मंगल आदि शयन लगि जोई । दम्पति की सेवा विधि सोई ॥
ताहि सदा सखि भाव सों ध्यावो । पलक एक अन्तर जनि लावो ॥६
अन्त समय मेरे ढिग एहो । कुञ्ज महल की सेवा पैहो ॥
अस कहि लगे ध्यान के माहीं । घड़ी दोय लगि सुधि तनु नाहीं ।७
फिरि बोले आज्ञा भई जोई । श्रीरङ्ग देवी दीनी सोई ।
आजे ते दिन सात प्रमाना । हमैं निकुञ्ज भवन में जाना ॥८॥

दो०—याही दिनके लिये सब, साधक सिद्ध सुजान ।
यतन अनेकन करत हैं, साधन विविध विधान ॥८९॥

अपने तो श्रीगुरु हरि व्यासा । जो मारग है किया प्रकाशा ॥
इनकी राह चलै सुष होई । साधन सिद्ध रह्यो नहिं कोई ॥१॥

जेते साधन उरमें धरहीं । तेते इन बिच अन्तर करहीं ॥
सबकों छोड़ मनाये इनहीं । प्रिया लाल पाये हैं तिनहीं॥२॥
याते तुम इनकों नित ध्यावो । और कहूँ भूलन मन लावो ॥
जे तुम परम परापद चाहो । तौ या बिना न आन उमाहो॥३
श्री हरिके अनेक हैं धामा । क्षीर शयन वैकुण्ठ ललामा ॥
गऊ लोक साकेत हु गावा । सर्वोपरि वृन्दावन भावा ॥४॥
श्रीगुरु वचन माहिं विश्वासा । तो हरि पावै बिनहिं प्रयासा ॥
तुम प्रसन्न चित नितही रहियो ।मानसि भाव सदा दृढ़ गहियो॥५॥
जीवन का करियो उपकारा । यही अहै उपदेश हमारा ॥
सुनि गुरु वचन महा मुद पावा। बारबार चरणन शिर नावा॥६॥
हाथ जोरि कहि गद गद बानी। बिनती करन लगे रस सानी ॥
धन्य धन्य मैं धनि हौं नाथा । कृपा करी अब भयऊ सनाथा ॥७
विनय नाथ इक सुनिये मोरी । किमि देखों मैं सुन्दर जोरी ॥
सोउ दया करि नाथ बतावो । श्यामाश्याम मोहि दरशावो॥८
कही तोहि मैं अवशि दिखाऊँ। जादिन नित विहार को जाऊँ॥
घरी दोय लगि दरशन कीजे । सोई रूप धारि हिय लीजे ॥९॥
प्रात समय सब शिष्य समाजू । दरश करन गये महाराजू ॥
सब ते स्वामी कहा बुझाई । सात दिवस तन और रहाई॥१०

दो०-सातें दिन मध्यान में, जाऊँ नित्य विहार ।
 अग्र वर्ति रँग देविकी, आज्ञा मस्तक धार ॥१०॥

और रहे जे शिष समुदाई । जो जहँ सुनि आये सब धाई ॥
परे आयके चरण मझारी ।भीर तहां अतिशय भइ भारी॥१॥
जिते लोग दरशन को आये। सब पै कृपा दृष्टि बरसाये ॥
बोले मधुर बचन सब पाहीं । देखो जगमें सुख कछु नाहीं॥२॥

जीवै मोह जाल लपटानो । है अबोध निज रूप भुलानो ॥
सदा जीव हरिके आधीना ।सो स्वतन्त्र निजकों लखि लीना। ३
जीव सदा निर्मल आरोगा । है शरीर संयोग वियोगा ॥
अणू मात्र जीवहि को जानो । प्रती देहमें भिन्नहि मानो ॥४॥
जानन योग याही को गाई । जाते जीव अनन्त कहाई ॥
हरि माया अनादि परि युक्ता । भगवत कृपा होय तब मुक्ता॥५
मुक्त भक्त किल बद्धरु मुक्ता । भेद प्रवाह निज तन आसक्ता ॥
अप्राकृत प्राकृत है रूपा । दो प्रकार के जीव अनूपा ॥६॥
माया पद प्रधान यह गायो । शुकादिक सम तहाँ दिखायो ॥
निज स्वभाव सब दोष विनासी । अशेष कल्याण गुणेक रासी॥७।
व्यूहन कर अंगी घनश्यामा । ध्याऊँ कमल नयन सुख धामा ॥
वाम अंग वृषभानु दुलारी । रति शचि रमा कोटि मद हारी॥८
रहीं विराज मोद हिय आना । अनुसौभग ते रूप समाना ॥
सखी अनन्त सदा परि सेवैं । रुचि अनुसार महा मुद देवैं ॥९
सकल इष्ट दायक फल कामा । जासु अधीन सदा घनश्यामा ॥
तिहि स्वामिनि ध्याऊँ युत प्रीती। जासु प्रसाद मिटै भव भीती॥ १०
उपासनीय सदा ए आहीं । जनकों दूसरि आश्रय नाहीं ॥
तम अज्ञान नाशके हेतू । नित्य उपासन करौ सचेतू॥ ११॥
सनन्द नादि मुनियों ने भाखी । नारद अखिल तत्व से साखी ॥
तिनेंनें यही कियो निरधारा ।युगलभजनबिन नहिं भवपारा।१२

दो०— सब विज्ञान यथार्थ मत, श्रुति स्मृतिन बषान ।
अखिल वस्तु सब ब्रह्म मय, वेद विदित यह मान ॥ ९१॥
श्रुति सूत्रन त्रै भांति के, रूप ब्रह्म को मान ।
भोक्ता भोग नियन्त ए, तीन ब्रह्म को जान ॥९२॥

कृष्ण चरण पंकजहि विहाई । और गती कहुँ नाहिं दिखाई ॥
शिव विरंचि नारद शुक देवा ।इन्द्र वरुण यम सुर मुनि जेवा॥ १
सबते बन्दित जो नित अहई । जाही सेय निज इच्छित लहई ॥
सो सुन्दर घनश्याम स्वरूपा । भक्त हेत धरि देह अनूपा ॥२॥
गौर श्याम जोरी सुख कारी । कोटि काम रति लज्जित भारी ॥
जाकी शक्ति अचिन्त्य कहावै । सुरनर मुनि कोउ भेद न पावै॥ ३
सबके ऊपर शासन कर्ता । कोटि अमित ब्रह्माण्डनि भर्ता ॥
दैन्यादिक गुण जामें होई । तापै कृपा करै प्रभु सोई ॥४॥
श्रीहरि कृपा दृष्टि जब होई । सद्गुरु शरणै आवै सोई ॥
शरण आयकें हरि गुण गावै । प्रेम लक्षणा तब उपजावै ॥ ५॥
सो उत्तम सबते अधिकाई । साधन रूपा औरहिं गाई ॥
रूप उपास्य प्रथम पहिचानै । दूजे रूप उपासक जानै ॥ ६॥
तीजे कृपा सुफल को लहनो । चौथे भक्ती रसको गहनो ॥
पांचे प्रति विरोधी जु अहई । पञ्चक अर्थ वेद यह कहई ॥७॥
साधक कों जानन यह चहिये । जानै तबै परम पद लहिये ॥
इष्ट अपन श्रीराधेश्यामा ।भजो नित्य परिहरि सब कामा॥ ८
मानुष देह मिलन हरि द्वारा । सोइ चतुर तजि जग व्योहारा॥
भजै सदा दम्पति मन लाई । तौ यह जन्म सुफल ह्वै जाई॥ ९
नहिं हरि भजन कर्म मन लावै । सर्ग नरक इहि लोकहिं आवै ॥
बिन हरिशरण भक्ति नहि पावै । जाय आय में आयु बितावै॥ १०।

दो०—यहि प्रकार उपदेश सुनि, खड़े सबै कर जोर ।
श्रीगुर मुख जनु चन्द्रमा, सबके नैन चकोर ॥९३॥
जैसे प्रफुलित कमल लखि, भ्रमर रहैं मँडराय ॥
तैसे गुरु मुख कमल कों, निरखत नाहिं अघाय ॥९४॥

सम्वत पन्द्रह सत तैंतीसा। फागुन शुभ दशमी शुक्लासा॥
गमन निकुञ्ज समय जब आयो। जय जै धुनी चहूँ दिशि छायो॥१
तब प्रभु मौन वृति करि लीना। पिय प्यारी चरणन चित दीना॥
ऐसे ध्यान माहिं भये लीना। तदाकार वृती रस भीना॥२॥
ताही समय सखी तहँ आई। उत्तम सुभग विमानहिं लाई॥
देखत तिनहिं भये सखी रूपा। मणि मंजरि जो नाम अनूपा॥३
हितू हरि प्रिया रंग सुदेवी। चार सखी प्रीतम प्रिय सेवी॥
तिनके चरण गई लपटाई। बार बार बहु विनय सुनाई॥४॥
बोली मोर एक अभिलाषा। विरजा सखी ते मैं कहि राषा॥
प्रीतम प्रिया तोहि दरशै हौं। पीछे निकुञ्ज भवनकों जैहौं॥५।
अस सुनि श्रीहरि प्रिया सयानी। रंगदेवी सों बचन बखानी॥
पिय प्यारी कों देहु दिखाई। याकी यह अभिलाष पुराई॥६॥
श्रीरंग देवि खोलि पट दीना। पिय प्यारी बैठे रस भीना॥
दरश किये व्रजभूषण देवा। औरन काहु लखे यह भेवा॥७।
उभय घरी दम्पति छवि जोई। फिर अन्तरहित भइ सब कोई॥
देखि युगल छवि परम अनूपा। तबते मगन भये निज रूपा॥८॥

दो०—ताही समय आकाश में, जै जै धुनि गइ छाय।
सबहिं कों विस्मय भयो, श्रीगुरू तहाँ न दिखाय॥९५॥
कहत परस्पर सबहिं जन, गये कहां गुरु देव।
सबकों विस्मित देखकें, कहि व्रज भूषण देव॥९६॥

श्री गुरुदेव निकुञ्ज पधारे। सुनि सब कीने जय जै कारे॥
जे बहु सन्त महन्त सुहाये। दरश करन स्वामी के आये॥१॥
ते सब धन्य धन्य मुख गावा। बड़े भाग्य दरशन हम पावा॥
ऐसे सन्त लखे कहुँ नाहीं। जो सदेह निज धामहिं जाहीं॥२।

सबके मन बाढ़्यो बहु भावा। कहँ भजन को अमित प्रभावा॥
मन भायी उत्सव बहु कीनों। असन बसन बहु मान जु दीनों॥
तबहिं सबनि मिलि कियो बिचारा। स्वामी पदको केहि अधिकारा॥३
सम्मति करि कहि श्रीगुरु सेवा। बहुत कीन ब्रजभूषण देवा॥
गुरुके कृपा पात्र ए पूरे। क्षमा शील सद्गुण युत रूरे॥४॥
अस कहि सबही एक मत कीना। ब्रजभूषण को गादी दीना॥
श्रीगुरु की रहनी अनुसारा। रहन लगे ताही जु प्रकारा॥५॥
इनहीं ते गादी की रीती। चली सुनो आगे जो बीती॥
सदा इकान्त रहैं दिन राता। मन चित युगल चरणमें माता॥६
इनको जन्म कर्म कछु गाऊँ। यथा भयउ कहि समुझाऊँ॥
कुरु क्षेत्र इक विप्र सुजाना। सदाचार रत अरु विद्वाना॥७॥
जगन्नाथ तेहि नाम सुहावा। तिया नाम सहदेवी गावा॥
भक्ति परायण द्विज सो होई। गीता पाठ करैं रस भोई॥८॥
नितही मनमें करैं विचारा। मिलै मोहिं कोउ सन्त उदारा॥
हरिकी शरण लेऊँगो जबही। भवकी फाँसि कटेगी तबही॥९॥
एक दिवस हरि स्वप्न माहीं। मथुरा जान कह्यो तापाहीं॥
प्रात होतही कियो पयाना। संग नारि सुत चार सुजाना॥१०

दो०—मथुरा पहुच्यो विप्र जब, पूछ्यो कोई बताउ।
यहां कौन बड़ सन्त हैं, दरश करन मैं जाउँ॥१७॥

कही सबन श्रीयमुना तीरा। एक सन्त हैं बड़ मति धीरा॥
नाम मुकुन्द देव तिन जानो। बड़े सिद्ध समरथ करि मानो॥१॥
ध्रुव टीलाते दक्षिण माहीं। आधकोश पर रहैं तहाँ हीं॥
सुनत विप्र तहाँ तुरत सिधावा। जाय दरश स्वामी के पावा॥२
करि दरशन है मुदित महाना। मानों पाये श्री भगवाना॥

पूछा स्वामि कहाँ तुम रहऊ। आपन नाम गाम सब कहऊ।।३
सुनि स्वामि के बचन रसाला। कहूँ सुनो हे दीन दयाला ॥
कुरुक्षेत्र में मेरो धामा। द्विज कुल जगन्नाथ मम नामा।।४
मैं गृह बसि नित करूँ विचारा। कैसे भव दुख मिटै अपारा ॥
एक दिवस स्वप्ने हरि मोहीं। मथुरा जाव सन्त मिल तोहीं।।५
सो अब नाथ शरण तव आयो। जन्मत मरत बहुत दुख पायो॥
अब राखो हरि शरण मझारी। त्राहि त्राहि प्रभु लेहु उबारी।।६।
सुनि द्विज बचन दया हिय आई। कोमल बचन कहे सुखदाई ॥
अभय होउ चिन्ता जनि करऊ। हरिकी कृपा दृष्टि चित धरऊ।।७।
कछु दिन यहाँ करहु तुम बासा। मनकी सब पूरै अभिलाषा ॥
अस कहि स्वामि भजन में लागे। विप्र रहन लागो मुद पागे।।८॥

दो०—मास एक बीतो जबै, विप्र रह्यो शिर नाय।
नाथ कृपा करि अब मुहिं, लीजै हरि शरणाय।।९८॥
बिना भजन भगवान के, जन्म अकारथ जाय।
अस बिचारि जे चतुर जन, सद्गुरु शरणे आय।।९९॥

देखि विप्र को भाव सुभावा। तब स्वामी निज निकट बुलावा॥
कही विप्र तू परम सुजाना। जो हरि भजन तोर मन माना।१
अस कहि चारि पुत्र युत नारी। लीन विप्रको शरण मझारी ॥
भजन रीत सब दीन बताई। जाते भव बन्धन मिटि जाई।।२।
दइ आज्ञा अब घरको जावौ। हरि हरि जनकों नित्य लड़ावौ॥
मनकी वृत्ति रहै हरि माहीं। जैसे कमल पत्र जल माहीं।।३॥
जलमें रहि जल परसै नाहीं। ऐसे तुमहुँ रहो जगमाहीं ॥
जैसे प्रीत मीन जल केरी। बिन जल मरत लगै नहिं देरी।।४
ऐसे मन को मीन बनावौ। हरि जल सों नित नेह लगावौ॥

राधाकृष्ण उपास्य हमारे । चरण सेय उतरो भव पारे ।५॥
सब कृत करौ मान मत अपनो । यह जग जानो जैसे सपनो ॥
जैसे फल जबहीं पक जावै । बिन तोरे आपहि गिर जावै॥६।
तैसे भजन सिद्ध जब होवै । जगत आप तजि न्यारे होवै ॥
जगत वृक्ष मनको फल जानो । सूर्य ताप हरि भक्ती मानो ॥७॥
भजन करत मन पकि जब जावै। छाँड़ि जगत हरिके गुण गावै ॥
सुनि गुरु मुख उपदेश महाना । निजकों विप्र धन्य बहु माना ॥८

दो०- जबहिं विप्र घर जानकों, करवे लगो समान ।
बड़ो पुत्र जो सबनते, रह्यो बड़ो बुधिवान ॥१००॥

कही पिता सों घर नहिं जाऊँ । श्रीगुरु चरण कमल नित ध्याऊँ ॥
सुनत हर्ष हिय भयो अतोला। धन्य धन्य कहि सुतसों बोला॥१
तुम सम भाग्यमान नहिं कोई । श्रीगुरु शरण रहौ सुद होई ॥
अस कहि तीन पुत्र संग नारी । गयो भवन निज विप्र सुखारी॥२
सोई भये व्रजभूषण देवा । जो सर्वस जानै गुरु सेवा ॥
सम्वत चौदह शत पिच्यासी । दशमी शुक्ल पक्ष मधुमासी॥३॥
शरण भये हरि चरण मझारी। प्रणत जनन कों करन सुपारी ॥
नित दम्पति कों लाड लडावैं । मानसि भाव सदा उर लावैं।४
कबहूँ व्रजमें बिचरि जू आवैं । व्रज लखि बहु प्रमुदित ह्वै जावैं ॥
कबहूँ श्रीयमुना के तीरा । बैठे ध्यान करें मति धीरा ॥५॥
सदा मधुर मुख वचन उचारें । मानौं वर्षत मधुकी धारें ॥
सुनि सुनि बचन सबै हर्षावैं । चरण कमल में शीश नवावैं॥६
बहुतन कों लिये शरण मझारी। तीन तापतें किये सुखारी ॥
श्रीहरि सेवा तिनहिं बतावैं । जातें जन सहजैं सुख पावैं ॥७॥
श्रीहरिको प्रसाद नित लीजे । बिन प्रसाद मुख और न दीजे॥

मिथ्या बचन भूलि जनि बोलो। काहू के अवगुण जनि खोलो॥८
काम क्रोध तृष्णा हंकारा। मोह लोभ आदिक बट मारा॥
इनके वश भूले जनि होऊ। दम्पति चरण करो नित नेहू॥६।
ठाकुर युगल किशोर हमारे। सदा सर्वदा राखन हारे॥
लाखों चूक होय जो जनकैं। त्याग करे नहि तउ पलछिनकैं॥१०
सबहीं भांति दया के खानी। करैं प्रीत निज जन पहिचानी॥
त्रिभुवन पोषन परम सुधाकर। जन्म जन्म हम तिनके चाकर॥११

दो०-विनय करो नित सरल चित, हे करुणा आगार।
दीन हीन मोहिं जानिके, राखो चरण मझार॥१०१॥

कर्म विवश निज योनि अनेका। पाउँ भले माँगू वर एका॥
जन्म जन्म तव पद्म परागा। नित नव मोर बढ़े अनुरागा॥१
ऐसे सबहिं विवेक सिखावैं। हरि मिलवे की राह बतावैं॥
बहुतन शिष्य करैं नित सेवा। तिनमें बड़ बनारसी देवा॥२॥
प्रेम सहित नित सेवा करहीं। समय समय रुचिलखि अनुसरहीं॥
जब गुरु करैं मानसी सेवा। पहरा देयँ बनारसि देवा॥३॥
जाते कोउ पास नहिं जावै। सेवा में विक्षेपन आवै॥
श्रीगुरु देव सोय जब जावैं। जाय इकान्त में ध्यान लगावैं॥४
मानसि सेव करैं भलि भाँती। आठौं पहर रहैं मन शान्ती॥
पहिले सन्तन की यह रीती। मानसि सेव करैं युत प्रीती॥५॥
सबके हृदय शुद्ध अति होते। घरी पहर पल वृथा न खोते॥
जब बहु सन्त एकत्रित होते। हरि गुण नाम रूप मन पोते॥६
नाम रूप लीला अरु धामा। कहि सप्रेम पाते विश्रामा॥
आप सदा पावन हिय रहते। औरन हूँ को पावन करते॥७॥
एक समय यमुना के तीरा। जहाँ कदम्बन की बहु भीरा॥

विविधि भाँति के फूले फूला। तेसोई पवन त्रिविध अनुकूला ॥८॥
दो०—इक कदम्ब के वृक्षतर, आप बिराजे आय।
बोले बनारसी देव तब, शीश चरण तर लाय ॥१०२॥
नाथ मोहिं पिय प्यारी जैसें। मिलैं वेगि कहिये विधि तैसें॥
बोले सुनो कहुँ समुझाई। जेहि विधि पिय प्यारी प्रगटाई॥१
चातक जैसे मरे पियासा। स्वाति बुंद बिन करै न आसा॥
तैसे स्वाति बुंद पिय प्यारी। तिनकर कृपादृष्टि हिय धारी॥२॥
औरन की स्वपने नाहिं आसा। गूढ़ बात मैं किय परकासा॥
सेवा अष्टयाम की जोई। पहिले तोहि बताई सोई॥३॥
येही एक मात्र आधारा। पिय प्यारी को नित्य बिहारा॥
सखी भाव से सेवत रहियो। महावाणी को रसनित गहियो॥४
विरजा सखी है नाम हमारा। वारिज मुषि सो नाम तुम्हारा॥
नित्य बिहार सेव प्रिय पीकी। रंगदेवी की रुचि लै नीकी॥५॥
और जीव जो शरण मझारी। आवै हरि आसा उरधारी॥
तिन्हें भजन की कहियो रीती। यथा होय दम्पति पद प्रीती॥६
प्रफुल्लित सुख रहियो सदाहीं। अब मैं जाउँ कुञ्जके माहीं॥
असकहि नेत्र बन्द करि लीना। सखी भावको चिन्तन कीना॥७॥
एक पहर हिय ध्यान जु कीना। फिर निरखे श्रीयमुन पुलीना॥
लीला एक अलौकिक देखी। पिय प्यारी जो कीन विशेषी॥८॥
श्रीकालिन्दी पुलिन के माहीं। कदम वृक्ष की शीतल छाँहीं॥
तहां एक सिंहासन सोहै। कोटिक रविशशि द्युतिको मोहै॥९
दो०—पिय प्यारी गल बांह दै, तापै रहे बिराज।
अष्ट सखी सब सेव में, खड़ी लिये सब साज॥१०३॥
श्रीरँगदेवी चँवर डुरावै। ललिता बीरी पान खवावै॥

सखी सुदेवी अतर लगावै । सखी विशाषा मुकुर दिखावै॥ १॥
चंपकलता मोरछल लीनें । चित्रा कर झारी रस भीनें ॥
विधा तुंग बीजना करहीं । इन्दुलेख जै जै उच्चरहीं ॥२॥
और सखी जे रहीं तहाँहीं । तिनके अस उपजी मनमाहीं ॥
चलों सबे फूलन ले आवें । दोउन को शृंगार करावें ॥३॥
लाइ सुमन सब भरि भरि झोरी । झम झमाति अति रसमें वोरी॥
विविध भांति कीने शृंगारा । अपनी अपनी रूचि अनुसारा॥४॥
लखि प्रीतम बोले मुसकाई । प्यारी मोरे मन अस आई ॥
आज करूँ शृंगार तुमारो । पुरवो यह अभिलाष हमारो॥५॥
सुनि प्यारी बोली हँसि बानी । प्यारे करो जु तव मनमानी॥
सुनि प्रीतम मन मोद बढ़ायो । प्यारी को शृंगार करायो ॥६॥
शिर पर मुकुट कलंगी सोहै । तुर्री लखि रति पति मन मोहै॥
श्रवनन कुण्डल पटुका सोहै । कटि काछनि देखत मन मोहै॥७॥
फूलन जामो औरु कर छरी । सखि जन देखें सबै मुद भरी॥
प्यारी प्रीतम को शृंगारा । करत मगन मन रुचि अनुसारा॥८॥
शीश फूल चन्द्रिका राजै । कर्न फूल अलकावलि भ्राजै ॥
फूलन हार बेंदनी कीनी । कंचुकि सारी फूल नवीनी ॥९॥
फूलन लहँगा कटि पहिरायो । पाय जेब नूपुर छवि छायो ॥
दोऊ दै बैठे गलबाहीं । सखि जन देखि देखि मुसकाहीं॥
दो०—फूलन को बिजना करैं, सखि हीये हुलसाय ।
गौरश्याम की छवि निरषि, बारबार बलि जाय ॥१०४॥
गौरेलाल सांवरी राधा । नख शिष सुन्दर रूप अगाधा॥
दोऊ मंद मंद मुसकावै । अरस परस्पर बलि बलि जावै॥ १
श्री यमुना की लहर कलोलैं । कोकिल कीर मधुर सुर बोलैं॥

मधुप मत्त ह्वै चहुँ दिशि डोलैं । पवन त्रिविध बह होलैं होलैं॥ २॥
श्रीस्वामी लखिके साक्षाता । रोम रोम पुलकित भयो गाता॥
तदाकार वृत्ति ह्वै गयेऊ । सहचरि रूप तुरत ही भयेऊ॥ ३॥
श्रीरँगदेवी के पद माहीं । शीश नवाय यूथ मिलि जाहीं॥
श्रीहरिप्रिया हितू हर्षाई । अपने अपने कण्ठ लगाई॥ ४॥
मणि मंजरी हर्षि हिय लाई । सखियन की जै जै धुनि छाई॥
इक इक फूलमाल सर्व लाई । कण्ठ मेलि मन मोद चढ़ाई॥ ५॥
श्रीवनारसी देव कृपाला । तहाँ खड़े देखैं सब हाला ॥
एक पहर तक ए सब होई । अन्तर ध्यान भये सब कोई॥ ६॥
श्रीगुरु को लखि अन्तर ध्याना । प्रेम मगन मन कर गुन गाना॥
फिर गुरुको उपदेश विचारा । श्रीगुरु चरण हीय महँ धारा॥ ७॥
आश्रम पर आये हर्षाई । पूछन लगे सकल गुरु भाई ॥
श्रीगुरु कहाँ ? कहि सब पाहीं । श्रीगुरु गये परम पद माहीं॥ ८॥
दो०–सबके मन अति सुख भयो, सुनि निकुंज गुरु वास ।
पूछे पर वरणी सबै, यथा भयो इतिहास ॥ १०५॥
सुनि जे सन्त महन्त महाना । श्रीस्वामी को अन्तर ध्याना॥
धन्य धन्य सब करैं बखाना । भजन प्रभाव अमित करिमाना॥ १
सबकी भई भजन अति प्रीती । युगल मिलन की भइ परतीती॥
हमकों भी मिलि हैं पिय प्यारी । शरणागत के जो सुखकारी॥ २॥
श्रीगुरु की गादी रहि जोई । सर्व सन्त एकै मत होई ॥
श्रीवनारसी देवहीं दीना । भक्ती में जो बड़े प्रवीना ॥ ३॥
सम्वत पंद्रह सौ इक्यासी । श्रीगुरू भये निकुंज निवासी ॥
महंत भये श्रीवनारसी देवा । तिनकर शकलसुनहुँ अब भेवा॥ ४
आदि गौड ब्राह्मन घर जायो । जन्म भूमि मरु दश सुहायो॥
सम्वत पंद्रह सो अरु तीसा । गुरु शरण आये वय तीसा॥ ५॥

बड़े सुशील धीर अरु ज्ञानी । त्याग वैराग सकल गुनखानी ॥
श्रीगुरु आज्ञा पाई जैसें । पालन करन लगे सब तैसें॥६॥
रात दिवस भजनहि लव लीना । कछुक दिवस आहार न कीना॥
मौन रहे मानसि में लीना । कछुक दिवसपय पानहिं कीना॥७
श्रीगुरु को रहस्य जो लेखा । पिया प्यारी निज नैन न देखा॥
सोई रूप सदा हिय माहीं । भूलत एक पलक हूँ नाहीं ॥८॥
सदा इकंत रहे अनुरागे । जुगल किशोर चरण में पागे ॥
बारह बन अरु उपवन जेते । कबहूँ सबही में फिर लेते॥९॥
जहाँ जहाँ लीला सुखदाई । पिया लाल कीनी मन भाई ॥
एक समय बर्षाने आई । एक वर्ष लगि रहे तहाँई ॥१०॥
दो०—आज्ञा दइ श्रीलाडली, एक दिवस तब जाय ।
जाउ गुरू जहाँ भजन किय, वहीं मिलूँगी आय ॥१०६॥
सुनि मथुरा को कियो पयाना । श्रीगुरु भजन थली सुखदाना॥
जीव बहुत तहाँ शरणहिं आवैं । तिनकों भजनरीति सिखलावैं१॥
युगल किशोर किसे बतावैं । जो जैसो अधिकारी पावैं ॥
भये शिष्य बहुतेरे आई । भजनानंदी दिये बनाई ॥२॥
शिष्य विरक्त भये बहुतेरे । गृहस्थ भक्तहु भये घनेरे ॥
विरक्तन में बड़ मोहन देवा । तिनपर अति कृपाल गुरुदेवा॥३॥
रुचि अनुसार सेव नित करहीं । समै समै आज्ञा अनुसरहीं ॥
श्रीगुरु के सँग रहैं सदाहीं । बिनागुरू दरश परैं कलनाहीं॥४॥
पंद्रह सौ पिचत्तर जानों । विक्रम सम्वत जन्म पिछानों॥
बाइस वर्ष वयस गृह त्यागे । श्रीगुरुचरण कमल अनुरागे॥५॥
श्रीगुरु सेवा सर्वस मानै । और कछु स्वपने नहिं जानै॥
एक समय हर्षित गुरुदेवा । बोले सुनहूँ मोहन देवा ॥६॥

कहो कहा चाहत मन माहीं । तजि संकोच कहहु मो पाहीं॥
सुनि गुरु वचन हर्ष हिय आनी । बोले परम मनोहर बानी॥७॥
जबते नाथ शरण तव लयऊ । सकल मनोरथ पूरे भयऊ ॥
शरण आपकी रहों सदाहीं । और बात कछु जानत नाहीं॥ ८॥
निशिदिनचरणकमलतवध्यावों । और बात सब दूर बहावों॥
जो जानो सो दीजे मोही । नाथ एक मैं जानों तोही॥९॥
सुनि अस वचन प्रसन्न गुरु होई । तोकों जग दुर्लभ नहिं कोई ॥
आज कहों सब तोहि बुझाई । यथा वेगि दम्पति पद पाई॥१०॥
दो०-हम तुम दोउ निकुंज के । सहचरि के अवतार ।
वारिज मुख मम नाम है । तव मोहिनी उदार ॥१०७॥
अपने इष्ट किशोर किशोरी । श्यामा श्याम मनोहर जोरी ॥
राधा कृष्ण युगल शुभनामा । नित विहरे वृन्दावन धामा॥१॥
लीला अष्टयामकी जोई । सदा सनातन इक रस होई ॥
गौरश्याम जो सुन्दर रूपा । सोई इष्ट उपास्य अनूपा ॥२॥
नाम रूप लीला अरुधामा । ए चारों दायक मन कामा ॥
सखी भावसो नित ही ध्यावो । तब सो धाम सहज ही पावो॥३॥
सहस्र कमल दल ऊपर सोहै । श्रीवृन्दावन अविचल जोहै॥
ताके ऊपर शत दल घेरा । जहाँ निकुंज बने चहुँ फेरा॥४॥
ताके ऊपर कमल विराजै । षोडश दलको अति छवि छाजै॥
श्रीयमुना चहुँ ओर विराजै । ता विच अष्ट कमल दलराजै॥५॥
आठ दलन पर आठ निकुंजा । एकते एक महा छवि पुंजा॥
उत्तर दल श्रीरँगदेवी को । रंगमहल राजत अति नीको॥६॥
दिशा ईशान सुदेवी केरो । भवन रसद सुन्दर चहुँ फेरो ॥
पूरव ललित महल ललिताको । जगर मगर फहराई पताको॥७॥

भवन विशाल अग्नि दिश माहीं। सखी विशाखा को झलकाहीं॥
दक्षिण चंपक लतिका को है। चम्प महल अति मनको मोहै॥८
दिशि नैऋत चित्रा को राजे। चित्र भवन चित्रित बहु भ्राजे॥
पश्चिमं तुंग महल अति सोहै। सखी तुंगविद्या को जोहै॥९॥
वायव इन्दु भवन अनिरूरो। इन्दु लेखिका को छवि पूरो॥
आठ दिशा सखि अष्टन केरो। अष्ट महल राजत चहुँफेरो॥१०॥
दो०—कमल मध्यमें कर्णिका, तेज मयी झलकाय।
मोहन महल विचित्र अति, अष्ट द्वार को भाय॥१०८॥
ताकी शोभा अनुपम राजे। छवि लखिकोटिक द्युतिधरलाजै॥
सो दम्पति को महल सुहाई। क्रीडा विविध करैं मन भाई॥१॥
याको अधिक विशेष विधाना। महावानी में कियो बखाना॥
ताकों पढ़ो सदा मन लाई। औरन ते मन धरि अवज्ञा ही॥२॥
आँगन मोहन महल जुमाहीं। मध्य सिंहासन अति छवि छाहीं॥
रतन जटित कंचन को जोई। ताकी उपमा लगे न कोई॥३॥
तापर युगल दिये गर बाहीं। छविलखि रतिपति कोटिलजाहीं॥
सखी आठ रुख लिये सदा हीं। तिनके परिकर अमित रहाहीं॥४
मंगल आरति शयन पर्यन्ता। सेवैं हिय में भाव अनन्ता॥
सोई नित ध्यावो मन माहीं। सखी विना तहँ औरन जाहीं॥५॥
अग्र वर्तिनी श्रीरँगदेवी। अपनें परिकर की है सेवी।
तिनके चरण कमल नित सेवो। जाते महल टहल सुख लेवो॥६॥
श्रीबनारसी देव सुजाना। इहि प्रकार सब कियो बखाना॥
सुनि गुरु बचन महासुदमानी। मोहन देव कही तब बानी॥७॥
धन्य धन्य मैं श्रीमहाराजा। तुमरी कृपा सुफल सब काजा॥
अस कहि चरण गये लपटाई। श्रीगुरु लीने हृदय लगाई॥८॥

दो०—बहुत दिवस गुरुदेव जू, करि मथुरामें वास ॥
फिर ब्रजमें बहु दिवस लगि, जहँ तहँ किय निवास॥१०९॥
बहुतन को दीक्षा दई, गुरु आज्ञा अनुसार।
जातें जन अनयास हीं, भवते होवई पार ॥११०॥
लखैं जाहि जैसो अधिकारी। तैसी भक्ति तासु हियधारी॥
एक बार गुरुदेव बुलाये। बहुते ब्रजबासी तहँ आये॥१॥
बोले बचन सबन सुखदाई। देखो यह ब्रज भूमि सुहाई॥
कृष्ण चरण अंकित है यामें। लीला विविध करें हरितामें॥२॥
परम पवित्र भूमि यह जानो। तुमरो जन्म भयो शुभ मानो॥
धन्य धन्य है भाग तुमारी। कृष्ण कृपा जानो अतिभारी॥३॥
कृष्ण भजन निशिवासर करहू। चरण कमल हिय ध्यानजु धरहू॥
ब्रह्मा आदि देव हैं जेते। शुक शंकर व्यासादिक जेते॥४॥
सब ब्रजरज की बांछा करहीं। ब्रज बसवे की आसा धरहीं॥
सो तुम सबन सहज में पाई। ताते सबन कहों समुझाई॥५॥
वृथा जन्म जग जानन दीजै। युगल किसोर भजन करि लीजै॥
मानुष तनको यह फल जानौ।सबतजिहरिचरणनरुचिआनौ॥६॥
सुनिके सबन हिये हर्षाई। चरण कमल में शीश नवाई॥
सेवामें रुचि सबकी बाढ़ी। भई प्रीति दम्पतिमें गाढ़ी ॥७॥
धाम समै जाने को जबहीं। सात दिवस पहले हीं तबहीं॥
अनुभव भयो कि यह नहिं रहनो। कियो विचार मौन अब गहनो॥८

दो०—सबसों मनहिं हटाय कर, कालिंदी तट जाय ॥
पिया प्यारी के रूपमें, दीनो चित लगाय ॥१११॥
तहँ गहवर वन कुंज में, बैठे ध्यान लगाय।
तरु कदम्ब की छांह जहँ, युगल मिलन लौ लाय ॥११२॥

लखे ध्यानमें लाडिलि लाला । लिये संगमें सखी रसाला ॥
श्रीयमुना जल में सब आई । लगे करन क्रीडा मन भाई॥१॥
दोउ परस्पर जल वर्षावैं । मधुरे गीत सहेली गावैं ॥
करि क्रीडा जब बाहर आये । कोमल वस्त्र अंग अँगुछाये॥२॥
नीलांबर पीताम्बर दोऊ । प्यारी पिय पहरैं मुद होऊ ॥
कदम्ब छांह आसन सुखदाई । तापै युगल विराजे आई॥३॥
श्रीयमुनाधार सखी को रूपा । किय फूलन शृंगार अनूपा ॥
विविध भांति फल और मिठाई । पिय प्यारी को भोग लगाई ॥४॥
सुख अँचवानी वीरी दीनी । कंचन थार आरती कीनी ॥
करि दण्डवत जोरि भुज ठाढी । विपुल पुलक अंगनिमें बाढी॥५॥
श्रीरँगदेवी जू रस भीनी । कृपा दृष्टि स्वामी पर कीनी ॥
तुरत भये सहचरि को रूपा । वय किशोरसो परम अनूपा॥६॥
रँगदेवी के चरण न माहीं । करी प्रणाम अंग पुलकाहीं॥
वारिज मुखी नाम सखि होई । मिली यूथ में आनंद भोई॥७॥
श्रीगुरु कृपा पात्र जो पूरे । मोहन देव सकल गुण रूरे॥
भजन करतमें अनुभव भयऊ । जिमि गुरुदेव कुंजमें गयऊ॥८॥
दो०—सम्वत सोलह सोरु दश, श्रीबनारसी देव ॥
श्रीदम्पतिके महल की, पाई रुचि कर सेव ॥११३॥
सुनि निकुंजके गमन को, सेवक शिष्य महन्त ।
धन्य धन्य कहवे लगे । महिमा भजन अनन्त॥११४॥
श्रीयुत मोहन देव प्रवीना । सब सन्तन मिलि गादी दीना॥
श्रीगुरु चरण कमल हिय ध्याई । चरण पादुका तहँ पधराई ॥१॥
सेवा नित्य करैं मन भाई । मानसि ध्यान सदा उर लाई ।
एक दिवस की है यह बाता । गोप वेष धरि के साक्षाता॥२॥
आये सुन्दर श्याम कन्हाई । स्वामी सों बोले मुसकाई ॥

बाबाजी दण्डोत हमारी। बोले मोहन देव सुखारी ॥३॥
जै श्रीराधा जय श्रीराधा। श्रीरासेश्वरि रूप अगाधा॥
गोप कहो तुम जय श्रीराधा। सकल तुमारी पूरे साधा॥४॥
का तुम रहो महलके माहीं। हां हम महलन रहैं सदाहीं॥
मनके महल प्रीति के कुंजा। जहँ राजे दम्पति छवि पुंजा॥५॥
सहचरि संग अमित हर्षाई। सेव करैं निज निज रुचिपाई॥
बोले गोप दोय को राजैं। जय श्रीराधेश्याम विराजैं॥६॥
कह्यो ग्वारिया वे नित जावै। यमुना के तट धेन चरावै॥
वे महल में कहो क्यों आवै। या बनते वा बन नित धावै॥७॥
कहि स्वामी गौ नाहिं चरावै। कुंज केलि ताको नितभावै॥
गाय चरायऽ कंस पछारै। सो नहिं आत कुंजके द्वारै॥८॥
दो०—कहीं श्याम में सोइ हौं, कहिं स्वामी तुम नाहिं॥
उनको प्यारी के बिना, पलक कल्प सम जाहिं॥११५॥
प्यारी को मुख चंद्रमा, प्रीतम नैन चकोर।
इकरसनित देखत रहैं, नाहिं जानै निशि भोर॥११६॥
कहि हरि तो फिर मोहिन मानो। स्वामी कहि तोको नहिं जानो॥
वेतो दोउ दिये गलबाहीं। सखी समूह लिये सँग माहीं॥१॥
लीला नित्य करैं मन भाई। सखी जनन की अति सुखदाई॥
लखि दृढ भाव स्वामिको जबहीं। भये प्रगट प्यारी पिय तबहीं॥२॥
करि दर्शन चरणन लपटाने। अस्तुति करन जबहिं मन आने॥
भये तबहिं प्यारी प्रिय लीना। स्वामिविकलजिमि जलबिनमीना॥३
तीन दिवस बीते इहि भाँती। चातक चाहे जिमि जल स्वाती॥
चै थे दिवँस भई असबानी। दियो दरशदृढ भावपिछानी॥४
अभी भजन करके मो ओरी। जीव लोंव भक्ती दे मोरी॥

यह अधिकार दियो है तोही । जीवन लाय मिलावौ मोही ॥
अन्त समय सहचरि की रूपा । नाम मोहनी परम अनूपा॥५॥
नित्य विहार मिलेगो तोही ।तहँ निशदिन अवलोको मोही॥६
यह सुनि शान्ति भई हिय माहीं। महामोद बाढ़्यो उमगाहीं ॥
यह सुनि शंक कोउ जनि करहीं। भक्ति प्रभाव हिये में धरहीं॥७॥
जापर कृपा दृष्टि हरि होई । ताकहँ दुर्लभ नहिं जग कोई ॥
श्रीगुरुदेव दयालु जब होई । एक पलक में रस महँ भोई॥८॥

दो०—कोटि जन्म के शुभ अशुभ, कर्म जीव के सोय ।
एक छिनक में नाश हो, गुरु प्रसन्न जब होय ॥ ११७॥
गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु है, गुरु महेश्वर जान ।
गुरू कृपा से आयकै, बेगि मिलै भगवान ॥११८॥

सोरठा-हरि गुरु अन्तर नाहिं, शास्त्र वेद हरिजन कहैं ।
श्री भागवत माहिं, उद्धव सों श्रीकृष्ण कहिं॥४॥

श्लो०-आचार्य्यं मां विजानीयात, नाव मन्येत कर्हि चित ।
नमर्त्य बुद्धयाऽसूयेत, सर्व देव मयो गुरुः ॥भाग०॥

जबसे युगल दिये गर बाँहीं । दरश भये यमुना तट माँहीं ॥
सोई ध्यान हिये नित धारै । पलक एक अन्तर नहिं पारै॥१
जैसो भाव करैं मन माँहीं । सोई लीला हिय दरशाँहीं ॥
सदा यमुन तट रहैं इकन्ता । दरश हेतु आवै बहु सन्ता॥२॥
देश देश के बहु नर नारी । दर्शन करि सब होइ सुखारी ॥
करैं सन्त सत्संग जो आई । सबसों सरल भाव दरशाई॥३॥
बहुत बचन मुखते नहिं भाखैं। केवल सबकी श्रद्धा राखैं ॥
करैं दण्डवत जो कोइ आई । जय श्रीराधे मुखते गाई ॥४॥

बहुतै जीव शरण में आवैं। दिक्षा देकर भक्ति दृढ़ावैं ॥
अपन इष्ट श्री प्रीतम प्यारी। सांची प्रीत करौ सुख कारी॥५।
रहो जगत से सदा उदासा। मन राखो प्यारी पिय पासा ॥
प्रीतम प्रीतिहि सों रुचि मानैं। बिना प्रीति कछु नहिं जानै॥६।
यद्यपि हैं सर्वेश्वर स्वामी। सर्व पूज्य प्रभु अन्तर यामी ॥
तदपि भक्त बश रहत सदाई। वेद पुराण भागवत गाई॥७॥
दुर्वाशा प्रति भाष्यो सोई। भक्ताधीन रहों मैं होई ॥
भक्त बिना मम और न कोई। भक्त कहै मैं करहूं सोई ॥८॥

दो०—जिमि पक्षी को पींजरे, धरि राखे जो कोइ।
भक्त हृदय तिमि पींजरा, धरि राख्यो है मोइ ॥११॥

जो शत्रु को निज पद देवै। ताकी कहा प्रीतिसों सेवै ॥
गरल दैन पूतना आई। सोइ परम पद तुरत सिधाई॥१।
जे जे घातक ब्रज में आये। तिन सबकों हरि धाम पठाये ॥
ते सबको बैकुण्ठहि दीना। नेहिन सँग निज लीला कीना॥२
जे जे जगते छूटन चाहीं। तिन सबको बैकुण्ठ पठाहीं ॥
जे हरि के सँग नेह लगावै। ते नितकी लीला में जावै॥३॥
प्रेमसों भजो अचल पद पावो। गर्भ वास में बहुरिन आवो ॥
नातर जन्म वाद ही जावै। लख चौरासी में दुख पावै॥४॥
ऐसे सबनि करें उपदेशा। जासों पावै प्रिय प्राणेशा ॥
पण्डित एक महा विद्वाना। नाम नरोत्तम तासु बखाना॥५।
काशी रह शास्त्र बहु जानै। कथा भागवत नित्य बखानै ॥
श्रोता सुनन बहुत तहँ आवै। सबके हिये प्रेम सरसावै॥६॥
एक समय प्रहलाद चरित्रा। कहत रह्यो सो परम पवित्रा ॥
यह श्लोक सुहायो जबहीं। लगो बिचारन मनमें तबहीं॥७॥

श्लो०-तत्साधुमन्येऽसुखर्यदेहिनां सदासमुद्विग्न धियामसद्ग्रहात।
हित्वाऽत्मपातं गृहमन्धकूपं वनंगतो यद्धरिमाश्रयेत ॥
मैं नित सबन कथा समझाऊँ। अपने हिय में नेंक न लाऊँ ॥
करें विचार कहाँ को जाऊँ। भजन रीत कैसे अब पाऊँ॥८॥
दो०-फिर इक दिन की बात है, कथा कहत ही माहिं।
आयो एक श्लोक तहँ, समझि गयो मन माहिं ॥१२०
श्लो० नैषां मतिस्तावदुरुक्रमांघ्रिं स्पृशत्यनर्थापगमो यदर्थः।
महीयसां पादरजोऽभिषेकं निष्किंचनानां न वृणीत यावत ॥
यह विचारि सो विप्र प्रवीना। गृह को त्यागि तुरत चल दीना॥
करत विचार वहां अब जाऊ। जहाँ दरश सन्तन को पाऊँ॥१॥
मन निश्चय करि मथुरा आयो। श्रीयमुना विश्राम नहायो ॥
करि अस्नान नित्य कर्म कीना।सन्त दरश को पुनि चलि दीना॥२
यमुना के तट दक्षिण आयो। नारद टीलो परम सुहायो ॥
तहाँ देखा सुन्दर वर बागा। दरश करन कों मन अनुरागा॥३
जबहिं वाटिका भीतर आयो। सन्त दरश करि मन हर्षायो ॥
हंस वंश सब सन्त विराजैं। सबन मध्य श्रीस्वामी राजैं॥४॥
मधुरी बानी रस बर्षावैं। सुनि सुनि सन्त सबै हर्षावैं ॥
करि सत्संग उठे सब सन्ता। विप्र तबही पायो एकन्ता॥५॥
शीघ्र धाय चरणन लपटायो। मानो रंक महा निधि पायो ॥
त्राहि त्राहि प्रभु शरण तिहारी। मोहि नाथ अब लेहु उबारी॥६॥
पूछत स्वामि कहो तुम भाई। कौन हेतु यहँ आयो धाई ॥
सब अपनो वृतान्त सुनायो।सुनि स्वामी तबही समुझायो॥७
सो विद्या जो हरि रति होवै। नहिं तो जन्म वृथा नर खोवै ॥
जो पढ़ि जगत ताप नहिं छूटै। मूरख सो बिनकन तुष कूटै॥८॥

सुनत वचन मन शान्ती आई। हाथ जोरकें विनय सुनाई ॥
मोकों नाथ शरण अब लीजे । हरि मिलवे को मारग दीजै॥९॥
जाते जन्म सुफल हो जाई । जरा मरण की त्रास नसाई ॥
सुनि स्वामी लिय शरण मझारी। वैष्णव चिन्ह दिये सुखकारी॥१०

दो०—दिय पांचों संस्कार शुभ, तिलक कंठि अरु छाप ।
मन्त्रराज श्रवनन विषे, मेट दियो भव ताप ॥१२१॥

नाम जुधरि नारायण देवा । हरि गुरु सन्त बताई सेवा ॥
पिय प्यारी मिलवे की रीती । कही सबे जैसे हो प्रीती ॥१॥
मंगल आदि शयन विधि जोई। मानसि सेव बताई सोई ॥
सदा हृदय में याको धारो । एक पलक नहिं अन्तर पारो॥२॥
सुनि गुरु बचन मुदित मन होई। लगे करन गुरु कही जु सोई ॥
यहि विधि मोहन देव महन्ता । बहुतन कों कीने रसवन्ता ॥३॥
धाम गमन तिनको जब भायो । तीन दिवस पहिले सुधि पायो॥
जाय इकान्त मौन गहि लीना । पिय प्यारी चरनन चित दीना॥
पहिले दरश गौर अरु श्यामा । किये रहे जो परम ललामा ॥
तामें तदाकार मन भयऊ । निज सखि रूप प्राप्त ह्वे गयऊ॥५
नित्य धाम को कियो पयाना । सुनि सब सन्त महा मुदमाना॥
जै जै जै धुन चहुँदिश छाई । धन्य धन्य सब करैं बड़ाई ॥६॥
श्रीगुरु चरण प्रीति अति जानी। श्री नारायण देव अमानी ॥
तिन्हें सबै मिलि गुरुपद दीना। उत्सव मंगल बहु विधि कीना॥७
सोलहसौ पैंषटहु जानो । मोहन देव निकुञ्ज पयानो ॥
सम्वत सोलहसौ चालीसा। माग मास द्वादशि शुक्लीशा॥८
श्री नारायण देव सुहाये। याही दिन गुरु शरणे आये ॥
गुरु की सेव करी अति नीकी । मिली टहल श्रीप्यारी पीकी॥९॥

हरि गुरु सन्त चरण में प्रीती। शान्त विरक्त अनुग हरि रीती॥
सत्य सिन्धु शीतल मित भाखी। विद्यावान भक्ति रस चाखी॥१०
दो०-सरल स्वभाव अमानि रह, जनु कछु जानै नाहिं।
बहुत लोग नित नेम सों, आवै दरशन माहिं॥१२२॥
सबन करें उपदेश उदारा। हमरे यहाँ अहै चट सारा॥
सद्विद्या सीखो नित आई। जाकरिकें भवरोग नसाई॥१॥
सुनि प्रसन्न होवें सब लोगा। श्रीभागवत सुनन के योगा॥
सुनिकें कथा मगन अति होवें। जन्म मरण को संशय खोवें॥२॥
अमृत की नित वर्षा बरसै। सबके हृदय प्रेम रस सरसै॥
सन्त गृही गोपी अरु गोपा। आवै सुनन हिये अति चोपा॥३
श्रोता बहुतक आवैं धाई। यहि विधि भीर रहै नित छाई॥
कथा समाप्त जबै ह्वै जाई। नाम ध्वनि सब करें सुहाई॥४॥
यमुना तट बोलें शुक सारी। प्रेम मगन सब होयँ सुखारी॥
घर बन काम करत सब ठाँहीं। नाम एक छिन भूलें नाँहीं॥५॥
इहि युग केवल नाम सहाई। वेद पुराण सन्त अस गाई॥
अधम अजामिल मरती वारा। पुत्र हेत सों नाम उचारा॥६॥
तेहि प्रभाव हरि धामहिं पावा। यातें नाम सर्वोपरि गावा॥
गऊ कोटिको दान करै जो। काशी परवी न्हान परै जो॥७॥
तीरथराज दश सहस वर्ष जो। कल्पवास हिम गलै हर्षि जो॥
एक बार हरि नाम उचारै। ताकी समता कोउन धारै॥८॥
दो०-प्रेम बिना हरि नहिं मिलै, कोटि करै उपचार।
नाम रटे बिन प्रेमको, हिय न होय सञ्चार॥१२३॥
इमि सद्विद्या कियो प्रचारा। गाम गाम घर बगर मझारा॥
सबकी रसना में बस लागी। नाम रटन में रह अनुरागी॥१॥

निशि वासर हरिमें मन लागा। भये विरक्त किये घर त्यागा ॥
बहुतन कों उपदेश जु कीना। हरिको प्राप्त सबै करि लीना ॥२
देश देश ते जन बहु आवैं। सुनैं कथा प्रमुदित हो जावैं ॥
दरश करैं दीक्षा बहु लेहीं। तिनको जन्म सफल करि देहीं॥३
जबलगि स्वामि कथा नित गावा। कलियुग को नहिं भयो प्रभावा॥
दरश करैं जेते तहँ आई। तिनके हृदय भक्ति प्रगटाई॥४॥
सदा नाम ध्वनि होय सुनेमा। सुनि उपजै सबके हिय प्रेमा ॥
बहुत सन्त तहँ करैं निवासा। अन्न वस्त्रसों पूरैं आसा ॥५॥
और अनाश्रित जो कोउ आवै। सो भोजन सों विमुख न जावै॥
सबकी रहै भजन में प्रीती। सन्त भक्ति की ऐसी रीती ॥६॥
शिष्य बहुत रह सेवा माँहीं। रतनदेव सब में बड़ माँही ॥
परम प्रवीन भक्ति रस माँहीं। गुरु आज्ञा में रहैं सदांहीं ॥७॥
सम्वत सोलहसै इक्यासी। शुक्ल पक्ष दशमी शुभ मासी॥
याही दिन गुरु शरणै आये। सब सन्तन के अति मन भाये॥
ब्रज को जन्म शान्त सन्तोषी। सरल भाव गुरु आज्ञा पोषी ॥८

दो०-लोचन राते रूप में, तन वृन्दावन धाम।
लीला ध्यावैं हीय में, रटैं रसन नित नाम ॥१२४॥

भक्ती रस जो परम अनूपा। ताको सब विधि जानै रूपा ॥
बड़े रसिक गुरु चरणन रागे। रुचि अनुसार सेव में पागे ॥१॥
श्री नारायण देव भुमांहीं। भक्ति बढ़ाई बहु दिन तांहीं ॥
धाम गमन समै जब आयो। पांच दिवस पहले सुधि पायो॥२
सत्रहसै इकतीसा आयो। परम धाम चलवे मन भायो ॥
तट एकान्त भानु तन याके। रतन देवसों कह्यो बुलाके॥३॥
मोहि बुलायो रँग देवीजू। गमन निकुञ्ज करूँ अबहीजू ॥

पास हमारे आवन कोई। अस कहि ध्यान मगन मन होई॥४
गौरश्याम छवि हिय में धारी। नखते शिख अनुपम मन हारी॥
तदाकार वृत्ति रस भीना। रात दिवस की खबर रहीना॥५
पाँचें दिवस मध्यान्ह सुहायो। शुभग विमान एक तहँ आयो॥
भयो प्रकाश दशौं दिश भारी। स्वामी तिहि छिन दृष्टि उघारी॥६
चार सखिन को दरशन पायो। उठि तिनके चरणन शिर नायो॥
नवला सखी केर अवतारा। भुवि में जीव हेत वपुधारा॥७
निज स्वरूप तुरतहिं ह्वै गयेऊ। सखियन तब शृङ्गार कियेऊ॥
ह्वै प्रसन्न चढ़ि शुभग विमाना। नित्य धामकों कियो पयाना॥८
दो०—सुमन वृष्टि भई गगन ते, जै जै धुनि चहुँ ओर।
तुरत जाय पहुँचे जहाँ, राजत युगल किशोर॥१२५॥
देखि शिष्य सेवक सकल, ब्रजवासी अरु महन्त।
परमहंस सब रसिक जन, कहैं धन्य ए सन्त॥१२६॥
सबके उपजी प्रीति नवीनी। प्रेम सहित नामः ध्वनि कीनी॥
हंस सुता तट बढ़्यो उछावा। सबके हृदय प्रेम सरसावा॥१॥
तन मन जनकी सुधि नहिं काहू। नदी प्रेम की बही अथाहू॥
अंग पुलक गद गद भइ बानी। बहे प्रेमको नयनन पानी॥२॥
दोय पहर बीते इहि भाँती। बीत्यो दिवस आइ गई राती॥
तब सब निज निज आश्रम आये। युगल रूप सबके उर छाये॥३॥
स्वामीजी को उत्सव भारी। किये सबै हिय आनन्द कारी॥
हरि गुरु संतन में अनुरागी। शान्त शील लखि परम विरागी॥४
सब मिलि रतन देव बैठाये। गादी पर चादर ओढ़ाये॥
कथा कीरतन साधु सेवा। जो कछु करत रहे गुरु देवा॥५॥
रतन देव जु और बढ़ाये। अष्टः पहर नाम ध्वनि छाये॥

और अतिथि अभ्यागत आवै। आश्रम में आनन्द बहु पावै।।६।
पात्र भेद जैसों जहँ पावै। तैसी सबकों सेव बतावै।।
और सबनकों कथा सुनावैं। आपन नित्य मानसी ध्यावैं।।७।
निज निज कुञ्जनते सखि आवैं। प्यारी पियको प्रात जगावैं।।
करि दर्शन चरणन शिर नावैं। मुख शोधन मुख वसन करावैं।।८

दो०—कछुक भोग धरि मंगला, आरति करैं सुहाय।
आनन्द में उमगाय कैं, न्हान कुञ्ज पधराय।।१२७।।
स्नान कराय अँगोछि अँग, पाटम्बर पहराय।
आवैं कुञ्ज सिंगार में, करि शृङ्गार सुहाय।।१२८।।

भोग सिंगार आरति करहीं। कुञ्ज बिहार जाय बिचरैहीं।।
राजभोग धरि शयन करावैं। चार घरी दिन रहे जगावैं।।१।।
उत्थापन को भोग लगावैं। फूल सखी की फूलें आवैं।।
संध्या आरति करि हर्षाई। अस्तुति गावैं सब मन भाई।।२।
पुनि ब्यारू को भोग लगाई। शयन कुञ्ज में शयन कराई।।
घरी छ सातक रजनी आवैं। तब सब सहचरि आय जगावैं।।३
रास मण्डल पर रास रमावैं। पुनि सब मिलकैं ब्याह रचावैं।।
ब्याह करैं गौने पधरावैं। रंग महल में शयन करावैं।।४।।
इहि विधि उर अभिलाष पुरावैं। सब मिलि श्रीहरिप्रिय दुलरावैं।।
सब सखि निज निज कुञ्ज पधारैं। युगल रूप निज हिय में धारैं।।५।।
इहि विधि सेव मानसी करहीं। क्षणिक एक अन्तर नहिं परहीं।।
नित एकान्त बिराजै आपू। बढ्यो भजन को महत प्रतापू।।६
बड़े बड़े राजा महाराजा। बैठि रहैं दरशन के काजा।।
जब स्वामी सेवा करि आवैं। दरशन करि सब आनन्द पावैं।।७
हाथ जोरि बहु बिनय सुनावैं। शरण होन कों सब ललचावैं।।

दर्शन में आकर्षण शक्ती। तुरत हिये में उपजैं भक्ती।८॥
नाथ लेहु निज शरण मझारी। अभय हस्त दै करहु सुखारी॥
नम्र जानि निज शरणहि लेवैं। पात्र जानकें शिक्षा देवैं॥९॥
सन्ध्या समय मानसी माहीं। प्यारी पिय बिहार बन जाहीं॥
दोय घरी तब बाहर राजें। भक्तन दरश करन के काजें॥१०
दो०–और सदा एकान्त में, रहैं मानसी माहिं।
पांच वर्ष यहि भांति ही, कियो भजन थल ताहिं॥१२९॥
सम्वत सत्रहसौ जुग बीशा। ऐसो चरित कियो जगदीशा॥
श्रीयमुना जल बढ्यो महाई। आश्रम काटि धार बह जाई॥१॥
तब स्वामी के मन अस आई। भजन थली कहुँ और बनाई॥
अस बिचारि वृन्दावन आये। घाट बिहार देखि मन भाये॥२॥
तहाँ एक वट वृक्ष सुहायो। आसन तातर आनि बिछायो॥
रहे जिते सब शिष्य सुजाना। सबको रहन तहाँ मन माना॥३
स्वामी के पूरव कछु दूरी। बसे सबै महिमा जिहि भूरी॥
बहुत लोग दरशन हित आवैं। यथा योग्य उपदेश बतावैं॥४॥
राम नगर पूरब में देशा। धर्म वान तहाँ रहै नरेशा॥
नित हरि भक्ति करै मन लाई। अरु सत्संग में समै बिताई॥५॥
दो०–वर्ष चालीस की भई, जबहिं अवस्था तास।
तीरथ यात्रा को चल्यो, उर में अधिक हुलास॥१३०॥
सोरह वर्ष पुत्र इक रहेऊ। ताको राजकुँवर पद दयेऊ॥
दर्शन सब तीर्थ को कीना। चार धाम करि ब्रज चित दीना॥१
मथुरा आय श्रीयमुना न्हायो। दर्शन करि वृन्दावन आयो॥
तहाँ दरश कीने बहु भाँती। सत्संगति कर भई हिये शाँती॥२
सुन्यो तहाँ यमुना के तीरा। रतन देव हैं महन्त सुधीरा॥

तिनके संग रहैं बहु सन्ता । भक्तिवान अति ही रसवन्ता।। ३
आयो तुरत दरश तहँ कीना । हिय में उपज्यो प्रेम नवीना ।।
एकै पहर रह्यो दिन शेषा । तबलों बैठ्यो रह्यो नरेशा।।४।।
चाह चटपटी बढ़ती जावै । कब स्वामी बाहर कों आवै ।।
जब आये स्वामी आसन पर । दरश हेत जे रहे तहाँ पर।।५।।
दो०—आय सबै चरणन परे, दरश किये हरषाय ।
नृपति तबहिं अति मग्न ह्वै, पर्यो चरण में जाय ।।१२१।।
दोउ कर जोरि बचन अस भाषा। नाथ मोरि पूरहु अभिलाषा ।।
मोकों चरण शरण में लीजै । हरिकी भक्ति कृपा करि दीजै।।१
हिय के नेत्र खोलि मम दीजै । अपनो जानि कृपा अब कीजै।।
भव रजनी को दोष बिनाशो । हरिको रूप हिये परकाशो।।२।।
अस कहि चरण गहे अकुलाई । त्राहि त्राहि अब लेहु बचाई ।।
इहि विधि विनय करी ह्वै दीना।हियको भाव स्वामि लखि लीना।।३
बोले गृह बसि हरिको सेवो । अन्न वस्त्र हरिजन कों देवो ।।
अस कहि संस्कार तिहि दीना। अरु उपदेश बहुत विधि कीना।।४
राजा के संग विप्र सुजाना । रहेउ पुरोहित अति विद्वाना ।।
सो स्वामी ते वचन जु भाषा । नाथ मोरि पूरहु अभिलाषा।।५।
दो०—धर्म शास्त्र अरु वेद में, कीनो यह निरधार ।
पितृ देव ऋषि तीन ऋण, चूके बिन नहिं पार ।।११२।।
वेदाध्ययन ऋषी ऋण खोवै । यज्ञ दान सुर ऋण को धोवै ।।
पुत्र पितृ ऋण ते करे मुक्ता । यहि विधि बहु ग्रन्थन में उक्ता।।१
बिना तीन ऋण दिये जु कोई । भव बन्धन ते मुक्त न होई ।।
तब जे बाल अवस्था माहीं । गृह तजि हो विरक्त बन जाहीं।।२
तिनकी गती होय किमि नाथा । मुहिं बुझाय प्रभु करो सनाथा।।

अरु द्वादश द्विज के जे कर्मा । तिनके बिना नहीं पद शर्मा ॥३॥
यही बात हरि गीता माहीं । तृतिय अठारह भाख्यो ताहीं ॥
श्लो॰—श्रेयान्स्वधर्मो विगुणेति । स्वेस्वे कर्मण्यारभतेति ॥
चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टमिति। शमो दमेति ॥ गीता ॥
सुनि बोले गुरु कहूँ बुझाई । ए सब अधिकारी प्रति गाई॥४॥
जाको जैसो हो अधिकारा । शास्त्रन तैसो कियो बिचारा ॥
श्रीभागवत इकादश माहीं । हरि भाख्यो उद्धव सों ताहीं॥५
अरु सप्तम में व्यास बखाना । नर हरि प्रति प्रह्लाद प्रमाना॥
श्लो॰—ज्ञाननिष्ठो विरक्तो वेति, विप्राद्विषड्गुण युतादिति । भा
गीता यजुर्वेद निरधारा । बिन हरि शरण नहीं छुटकारा॥६
श्लो॰—मामेव ये प्रपद्यन्तेति,तमेव शरणंगच्छेति,तमेव विदित्वेति।
दो॰-अससुनि विप्रचरणन परयो, करो मोर उद्धार ।
नाथ मोहिं अब लीजिये, आपन शरण मझार ॥१३३॥
सम्वत सत्रह सौ सुभग, और अठहत्तर जान ।
श्रावण शुक्ल त्रयोदसी, शरण दिवस उनमान ॥१३४॥
जानि पात्र लिय शरण मझारी। वैष्णव चिन्ह दिये सुखकारी ॥
नैना देव नाम शुभ दीना । युगल भाव की सेव प्रवीना॥१॥
राजा भवन गयो सुख दाई । भजन रीत गुरुते सब पाई ॥
नैना देव जु परम प्रवीना । गुरु सेवा में रह लवलीना ॥२॥
सबसों नम्र भाव गहि लीना । मधुर बचन बोलैं रस भीना ॥
एक समय श्री गुरु प्रति बानी । बोले मनहुँ अमी रस सानी॥३॥
अहो नाथ दरशन किमि होई । करो कृपा प्रभु कहिये सोई ॥
कहि गुरु सुनो कहौं तुहि पाहीं। गुप्त बात राखों कछु नाहीं॥४॥
अपने इष्ट निकुञ्ज बिहारी । आह्लादनि आनन्द सुखकारी॥

श्रीवृन्दावन नित्य बिहारा। क्रीड़त जहां युगल सुखकारा॥५

दो०–आठ सखिन के आठ जहँ, कुञ्ज प्रधान बखान।

मोहन महल विचित्र अति, जिहिं नहिं उपमा आन॥१२५॥

औरहु अमित कुञ्ज तहँ राजैं। अमित सखी सेवत सुख साजैं॥

रंग सुदेवी ललित बिशाषा। चम्पलता चित्रा मुद भाखा॥१॥

तुँगविद्या इन्दु लेखा जानो। इनकी आठ आठ परिमानो॥

तिनकी आठ आठ रंग राती। तिनहुँ की परिकर बहु भाती॥२॥

आठ पहर की सेवा जोई। सेवैं सकल मुदित मन होई॥

मंगल आरति शैन प्रयन्ता। प्यारी पिय की सेव अनन्ता॥२

पहिलि कुञ्ज मंगल मन भावैं। दूजे माहीं स्नान करावैं॥

तृतिय सिंगार आरती करहीं। चौथे कुञ्जन माहिं बिचरहीं॥४॥

पांचवे राज भोग करवावैं। छठवें बन बिहार मन भावैं॥

सन्ध्या आरति करैं तहांहीं। सतवें ब्यारू करवे जाहीं॥५॥

दो०–सन्ध्या शयन कराय तहँ, फिर जगाय ले जायँ।

रास चौक पर रास कर, आठें शयन करायँ॥१२६॥

कबहूँ मोहन महल मझारी। अष्टयाम सेवा सुखकारी॥

पिय प्यारी दीने गल बाँहीं। बिछुरत जिये परत कल नाहीं॥१

सखी निरन्तर सेवा माहीं। पुरुष भावको गम तहँ नाहीं॥

आठ प्रधान सखी जे गाई। तिन आश्रित बिन और न जाई॥२

ताते सखी भाव हिय धारी। पिय प्यारी सेवौ सुखकारी॥

नीरज नैनी नाम निज जानो। रतना वली रूप मम मानो॥३॥

अग्रवर्तिनी श्री रंग देवी। अपने परिकर की हैं सेवी॥

थल एकान्त बैठि नित ध्यावो। मनसे सुखी रूप हो जावो॥४॥

यही एक दरशान करवे को। सुगम उपाय धाम मिलवे को॥

सुनि गुरु बचन महा मुद होई। चरण कमल शिर धारे सोई।।५।।
दो०—रतन देव श्रीस्वामि जु, बहुत समय परयन्त।
जगत भक्ति विस्तार किय, शिष्य भक्त बहु सन्त ॥१३७॥
बहुतनकों हरि भक्ति दृढ़ायो। बहुतनकों हरि प्राप्त करायो ॥
सम्वत सत्रह सौ पिचासा। नित्य धाम चलवे करि आसा।।१
सब सन्तन तें कह्यो बुलाई। तीन दिवस यहँ और रहाई ॥
चौथे दिवस निकुञ्ज पयाना। बसत जहाँ पिय प्यारि सुजाना॥२
सुनि सब सन्त हिये हर्षाई। कीर्तन करन लगे मन लाई ॥
स्वामी श्रीयमुना तट जाई। लता तरे बैठे सुखदाई ।।३॥
तिसर दिवस देखी यह लीला। यमुना पुलिन परम शुचि शीला॥
रास बिहार करत पिय प्यारी। सखी संग लीनें सुखकारी।।४॥
गौर सांवरी मूरति सोंहैं। कोटि न कोटि रतीपति मोहैं ॥
करि दरशन मन बढ़्यो उमंगा। तुरत भयो सहचरि को अंगा।।५
दो०—वय किशोर सुन्दर सरस, रतनावलि शुभ नाम।
जाय मिली निज यूथ में, पूजे सब मन काम ॥१३८॥
जिते शिष्य सेवक अरु सन्ता। जै जै ध्वनि करि मन हर्षन्ता॥
महामोद उत्सव अति भारी। कीर्तन गान किये सुखकारी॥१॥
स्वामीजी को सुयश प्रतापू। प्रगट भयो मेटन सन्तापू ॥
गुरु आचारज महिमा भारी। जो समझै सो होय सुखारी॥२।
तब सन्तन मिलि कियो बिचारा। शान्त शील सन्तोष उदारा ॥
क्षमा आदि सद्गुण की खानी। सबन मान मद आप अमानी॥३
नैना देव भक्ति रस पूरे। गुरु सेवा कीने अति रूरे ॥
अस बिचारि सबके मन भाई। गुरु गादी पर दिये बिठाई ॥४॥
श्रीगुरु आज्ञा दीनी जोई। युगल चरण ध्यावैं रस भोई ॥

सन्तन कों गुरु सम नित सेवै। भूखे को प्रसाद नित देवै॥५॥
सोरठा-निशि दिन श्यामाश्याम, युगल नाम पावन परम।
मुखते आठों याम, श्रवत रहै नित प्रेम सों॥५॥
व्यर्थ अलाप कबहुँ नहिं भावै। महल टहल की बात सुहावै॥
बोलें सबसों मीठी बानी। मनकी हरन प्रेम रस सानी॥१॥
ऐसी रहनि रहें जग माहीं। भाव हियें दरशावै नाहीं॥
थोरो बोलें रहैं इकन्ता। सदा मानसी ध्यान धरन्ता॥२॥
जो कोऊ दर्शन कों आवै। सो अवश्य सुख शांती पावै॥
ऐसी रहनि देखि सुखदाई। सबै सन्त जन करें बड़ाई॥३॥
सन्त विरक्त जहाँ जो आवै। करि सत्संग मुदित ह्वै जावै॥
अशन बसन सों सबै लड़ावैं। सन्तन हियो प्रेम भरि आवै॥४॥
दर्शन हेत भक्त बहु आवैं। सबते नाम ध्वनी करवावैं॥
जै जै श्यामा जै जै श्याम। जै सहचरि वृन्दावन धाम॥५॥
भजन करन की रीत बतावैं। सुनि मृदु वचन सबै हर्षावैं॥
बहुत शिष्य भये तिन्हैं दृढ़ायो। हरि गुरु हरिजन सेव बतायो॥६
दो०-सेवा में साँचो रहै, श्रीगुरु सों नहुराव।
साधुन सों सन्मुख रहै, सो निश्चय पद पाव॥१२९।
पूरब दिसा विप्र इक रहेऊ। बीश वर्ष आय जब गहेऊ॥
पढ़ि विद्या उपज्यो वैरागा। तीर्थ करन तासु मन लागा॥१
सबै तीर्थ करि ब्रज में आयो। गोकुल मथुरा दर्शन पायो॥
श्रीगोवर्धन अरु बर्षानो। नन्दगांव दर्शन मन मानो॥२।
पुनि आयो वृन्दावन धामा। दर्शन करि पूरन मन कामा॥
श्रीयमुना तट परम सुहायो। तहां दरश सन्तन को पायो॥३॥
नाम ध्वनि सुनि हिय हर्षावा। पुनि स्वामी को दर्शन पावा॥

स्वामी में आकर्षण शक्ती । विप्र हिये में प्रगटी भक्ती ।।४।।
अति अधीन चरणान लपटाई । मोहिं शरण लीजै सुखदाई ।।
कहि स्वामी सुनि विप्र सुजाना। भजन करन जो तव मनमाना।।५
दो०—यहाँ रह नित कथा जु सुन, सन्त सेव मन लाय ।
भावै साधु होईयो, भावै घरको जाय ।।१४०।।
आज्ञा पाय रहन तहँ लागो । सन्त सेव में अति अनुरागो ।।
दिन दिन भक्ति बढ़न हिय लागी।हरि हरि जनमें मति अति पागी।।१
सन्त प्रसन्न रहैं सब ताते । करैं बड़ाई लखि सुखपाते ।।
महाराज ते बिनय उचारी । नाथ विप्र यह बड़ सुखकारी।।२
याको चरण शरण अब लीजै । वैष्णव को बानो करि दीजै ।।
अर्ध वर्ष करिकैं जु परीक्षा । तबताको दीनी हरि दीक्षा।।३।।
उर्धपुण्ड तुलसी गल माहीं । श्रवण मन्त्र चक्रांक भुजाहीं ।।
धीर स्वभाव रूप अभिरामा । रामदास शुभ दीनो नामा।।४।।
युगल उपासन प्यारी पीको । सहचरि भाव दीयो अति नीको।।
रसिक नाम महल की सेवा । दई कृपा करिकैं गुरु देवा ।।५।।
दो०—हरि गुरु हरिजन सेवहु, सरल स्वभाव अमान ।
युगल नाम मुखते सदा, जपो परम हित आन ।।१४१।।
सत्रहसौ अठनवे को वर्षा । फागुन शुक्ल दशम दिन दर्शा ।।
जब गुरु वेश सन्त को दीनो । तबते मानों जन्म नवीनो ।।१।।
बार बार गुरु चरण न माहीं । करैं दण्डवत अति हर्षाई ।।
सन्त चरण रज मस्तक धरहीं । सबहिं सप्रेम दण्डवत करहीं।।२।
पिय प्यारी सन्मुख हर्षाई । नृत्य करन लागे मन भाई ।।
मगन भये गुरू सेवा पाई । टहल करैं नित मन रुचि दाई।।३
सन्तन कों लागे अति प्यारे । सबसों मधुर बचन उचारे ।।

इहि विधि नैना देव महन्ता। बहुतन कों कीने रसवन्ता॥४॥
बहु जीवन कों भक्ति दृढ़ायो। बहुतन कों हरिधाम पठायो॥५॥
दो०—हरि सेवा हरि कीर्तन, घर घर किये प्रचार।
जग सन्ताप छुड़ायकें, बहुत किये भव पार॥१४२॥
धामें गमन समय जब आना। बीश दिवस पहिले ही जाना॥
सबहिं बुलाय कही यह बाता। आज्ञा भई हमें साक्षाता॥१॥
बीश दिवस अब और रहाऊँ। पाछे कुञ्ज भवन को जाऊँ॥
सुनि सब सन्त मगन अति भारी। स्वामी सों अस बचन उचारी॥२
यही हेतु योगी अरु ज्ञानी। साधन कर तपसी अरु ध्यानी॥
सोई सहज भक्ति करि पावें। श्यामा श्याम तुरत अपनावें॥३॥
सब से मन उपरामहिं कीनां। प्यारी पिय चरणन चित दीनां॥
बैठ इकान्त मौन व्रत धारी। सुमिरत गौरश्याम सुखकारी॥४
नखते शिख लगि रूप निहारा। तन्मय भये नहिं देह सँभारा॥
रामदासजी नित ढिंग रहहीं। कोई और तहाँ नाहिं जहहीं॥५॥
दो०—इहि विधि बीते अवधि के, आयो सुभग विमान।
नित्य धाम को आप अब, करिये तुरत पयान॥१३४॥
ऐसे सखी कही जब बाता। नेत्र खोलि देखे साक्षाता॥
दरश करत सहचरि भये रूपा। नीरज नैनी परम अनूपा॥१॥
सखिन विमान लीन बैठाई। बार बार जय जय ध्वनि छाई॥
सुमन वृष्टि करि अति हर्षाई। नित्य धामकों तुरत सिधाई॥२॥
सम्वत अठारह सौ पचीसा। परम धाम गमने भगतीसा॥
पुष्प वृष्टि लखि सब तहँ धाये। स्वामीजी को तहाँ न पाये॥
जै जै शब्द कहन सब लागे। धन्य धन्य कहि नाचन लागे॥३
कीर्तन करन लगे हर्षाई। दशों दिशा मंगल ध्वनि छाई॥

मनुष देह कर यह फल भाई ।गुरुशरणागति मिलि सुखदाई॥४
मानुष देह पाय जग माहीं । गुरू तत्त्व जो समझै नाहीं ॥
सो निष्फल ही जन्म गवावै । ध्येय धाम को कबहुँ न पावै॥५॥
दो०—श्रीगुरु को उत्सव महा, कियो सबन हर्षाय ।
रामदास को पात्र लखि, गुरु गादी बैठाय ॥१४४॥
रामदास कृपा गुरु पूरे । भजन सेव में अति रंग रूरे ॥
ऐसो सुयश बढ़्यो जग माहीं । अमित लोग दरशन कों आहीं॥१
बहु जीवन के भव दुख खोये । जाकों कृपा दृष्टि करि जोये ॥
त्रिविध ताप कबहुँ नहि व्यापा। शोक मोह मेटैं सन्तापा ॥२॥
श्रीहरिव्यास महा सुख दानी । कुञ्ज केलि प्रगटि महा बानी ॥
ताहि रीत प्यारी पिय सेवैं । और कहूँ वृती नहिं देवैं ॥३॥
प्रातःकालहिं कर असनाना । सखी स्तोत्र कहि वीणा बजाना॥
पिय प्यारी कों नित्य जगाना। जै नव रंग बिहारनि गाना॥४।
मुख सोधन सुख बसन कराई। मंगल भोग आरती गाई ॥
शुचि अन्हवाय सिंगार करावैं। भोग सिंगार आरती लावैं॥५॥
प्रेम सहित गावैं हर्षावैं । मगन होय निरतत सुख पावैं॥
नयनन बहै प्रेम की धारा ।गद गद वचन पुलक अंग सारा॥६
दो०—तन की सुधि कछु ना रहै, यहि प्रकार करि नृत्य ।
प्रेम रंग बर्षाय कैं, करैं सबहिं कृत कृत्य ॥१४५॥
सोरठा-धन्य धन्य महाराज, कहैं भक्त दरशक सकल ।
इहि विधि संत समाज, नित्य लड़ावैं चावसों ॥६॥
बहुत लोग दर्शन को आवैं । देखत महा मुदित ह्वै जावैं ॥
संत समाज कीर्तन करहीं ।सुनि सुनि लोग भक्ति अनुसरहीं॥१
कथा रसीली नित प्रति होवै । सुनि सबको चित भावहिं भोवै॥

सन्त सेव में रुचि उपजावैं। गेह जनन को मोह छुटावैं॥२॥
एक समय सब सन्त समाजू। द्वारावती दरश के काजू॥
सबके हिये हिलग अस लागी। दरश करन की मनसा जागी॥३
वैष्णव धर्म को चिन्ह महाना। द्वारावती छाप परमाना॥
भक्तमाल में महिमा गाई। छाप लियें हरिधामहिं जाई॥४॥
यम की शंक रहै कछु नाहीं। छाप देखि यमदूत डराहीं॥
चलो स्वामि सों बिनय उचारैं। जाते द्वारावती पधारैं॥५॥
दो०–अस विचारि के संत सब, गये स्वामि के पास।
चरण कमल में नमन करि, कीने बचन प्रकाश॥१४६॥
सोरठा-छाप लेन की चाह, है सन्तन के हीय में।
अरु दर्शन को लाह, होय द्वारका नाथ को।७॥
सुनि गुरुवर के मन रुचि माना। तुरत द्वारका किये पयाना॥
गोविन्ददास शिष्य मन माना। संत सेव में परम सयाना॥१॥
ताको वृन्दावन में राखा। अरु सन्तन सों स्वामी भाखा॥
चलो सबन को दरश करावैं। तीरथ और अनेक दिखावैं॥२॥
संग संत इक शत पचीसा। चले सुमिरि द्वारका धीसा॥
श्री ठाकुर सेवा संग माहीं। कथा कीर्तन करत सदाहीं॥३॥
गाम गाम हरि भक्ति दृढ़ावैं। देश पवित्र होय जहँ जावैं॥
इहि विधि संत समाज प्रयागा। पहुँचि द्वारका युत अनुरागा॥४
किये गोमती में अस्नाना। दर्शन करि हिय अति हर्षाना॥
बहुत दिवस तहँ कीन निवासा। औरहु संत बढ़े बहु पासा॥५॥
दो०–गोपी तराइ न्हायकें, भेट द्वारका जाय।
प्रभु द्वारकानाथ के, दरश किये पुनि आय॥१४७॥
सबै सन्त किये छाप सुहावा। भये प्रसन्न मन बाँछित पावा॥

तहँते पुरी सुदामा आये। दरशन करि गिरिनार सिधाये॥१
क्षेत्र प्रभास दरश पुनि कीने। बाद काठिया को चल दीने॥
तहँते चले देश गुजराता। संत पांच शतसंग जमाता॥२॥
चातुर्मास बड़ौदा कीना। बहुतन को तहँ दीक्षा दीना॥
राजा के मंत्री अरु भाई। पुत्र शिष्य कीने तहँ जाई॥३॥
ग्राम ग्राम में भक्ति प्रचारी। जहाँ तहाँ शिष किय बहु भारी॥
यथा पात्र लखि करि उपदेशा। इहि विधि विचरे बहुते देशा॥४।
तिहि गुजरात कढ़ी इक गामा। राज बड़ौदा माहिं ललामा॥
तहँ पर रहै राज परिवारा। संत सेव में परम उदारा॥५॥

दो०-तहां राज परिवार में, खबर मिली अस आइ।
 वृन्दावन के सन्त बहु, रमणी करते जाइ॥१४८॥

दरशन हेत गयो तहँ राजा। रहै जहाँ पर संत समाजा॥
दरशन किय जबहीं स्वामी के। मिटे शोक सब भव रजनी के॥१॥
नाथ आप किहि ठाम बिराजो। कहा नाम किमि यहँ सुखसाजो॥
शुभ स्थान वृन्दावन धामा। रामदास दीने गुरु नामा॥२॥
सन्तन मन प्रगटी अभिलाषा। दरश द्वारकानाथ हुलासा॥
तहां जाय दरशन करि आये। पुनि डाकौर गये मन भाये॥३।
अब चह पञ्चवटी को जाना। पावस लखि यहँ कियो ठिकाना॥
बार बार चरनन शिर नाई। नृपति बिनय बहु भाँति सुनाई॥४
नाथ मोर घर पावन कीजे। सब परिवार शरण महँ लीजे॥
स्वामी कह्यो कौन तुव गामा। राजा कह्यो कढ़ी है नामा॥५॥

दो०-सुनि स्वामी हर्षित भये, चले ताहि के संग।
 आये ताके राज में, लिये सन्त सब संग॥१४९॥

सोरठा-कोश मात्र जब गाम, रह्यो तबै राजा कह्यो ।
रहो नाथ यहि ठाम, मैं लाऊँ सब साज सजि॥८॥
अस कहि तब नृपति घर गयऊ। साज समाज सजत सब भयऊ॥
हाथी रथ अरु घुड़ असवारा। बजे विविध बजाव नगारा॥१॥
लोग हजारन कौं लै संगा। गुरु सेवा को बढ्यो उमंगा॥
तोप छुटै मुख जैजै भाखे। सब जन दरश करन अभिलाखे॥२
पहुँचि स्वामि के दरश जु कीने। स्वामी चरण भेट बहु दीने॥
हाथी पर स्वामी हिं बैठावा। सब सन्तनको रथहिं चढ़ावा॥३॥
चमर करे राजा हर्षाई। छत्र लिये ताको लघु भाई॥
कीयो राज महल पधरावा। सबके मनहिं बढयो अति चावा॥४
मणि चौकी स्वामी आसीना। चरण धोय चरणोदक लीना॥
द्वितिय दिवस संयुत परिवारा। शिष्य भयो सह सचिव भुवारा॥५
मास एक लगि सबको राखा। कह्यो नाथ मम इक अभिलाषा॥
श्री रणछोड़ नाम गृह मेरे। ठाकुर हैं राखहु निज नेरे॥६॥
दो०-मंदिर वृन्दा विपिन में, इनको लेहु बनाय ।
द्रव्य बहुत सो देऊँगो, रुचि सों भोग लगाय॥१५०॥
अस कहि द्रव्य भेंट बहु कीना। ठाकुरजी दीने रस भीना॥
बीश सहस हरि मंदिर ताहीं। और लगावो सेवा माहीं॥१॥
हाथ जोरि अस विनय उचारी। नाथ हमें बहु कीन सुखारी॥
वर्ष दिना में दरशन दीजे। दास जानिकैं किरपा कीजे॥२॥
साठि तीन शत रौप्य सदाहीं। वर्ष मांहि सेवा के ताहीं॥
देहौं हर्षि दरश हू करिहौं। जाते सहज जगत ते तरिहौं॥३॥
राज बड़ौदा को जो भाई। पहिले भयो शिष्य जो आई॥
सो स्वामी संगहि लगि आयो। कह्यो रह्यो बहु आनन्द पायो॥४।

स्वामी सों बोल्यो कर जोरी। सेवा नाथ लेहु कछु मोरी ॥
श्रीहरिके नित भोग जु हेता। अंगीकृत हो कृपा निकेता॥५॥
दो०–चौरासी सतया सदा, वर्ष माहिं इत आय।
लीजै दीजै दरशहु, हमरे तुम सुखदाय ॥१५१॥
और एक मंदिर हरि केरो। करन हेतु इच्छा है मेरो ॥
चलौ कृपा करि गाम पधारो। जाते सुफल होइ परिवारो ॥१॥
अस कहि निज ग्रामहिं ले गयऊ। मंदिर एक बनावत भयऊ ॥
बारह सौ की वृत्ति लगायो। राधामोहन कों पधरायो ॥२॥
बहु सन्मान स्वामि को दीनो। रहन हेत आग्रह अति कीनो ॥
स्वामी कही यहां नहिं रैहों। श्रीवृन्दावन को अब जैहों॥३॥
भजन सेव की रीत बतायो। और बहुत विधि सों समुझायो॥
स्वामी निज इक शिष्य तहाँई। सेवा के हित मन्दिर माँई ॥४॥
राखि चले वृन्दावन धामा। करि सुमिरन श्रीराधेश्यामा ॥
सन्त समूह संग में लीने। हरि भक्ति में परम प्रवीने ॥५॥
सन्त समागम तीरथ राजू। भव बंधन मेटन के काजू ॥
जो जन संत सेव मन लावै। हरि की भक्ति सहज सो पावै॥६
योग यज्ञ जप तप अरु ज्ञाना। बिन भक्ति हरि एक न माना ॥
सो भक्ति दुर्लभ जग माहीं। सतगुरु शरणै सुलभ आहीं॥७
सो सतगुरु घर बैठे आवै। जाको हरि हिय में अपनावै ॥
सतगुरु की महिमा बड़ भारी। जो समझै सो होय सुखारी॥८
दो०–सतगुरु हरिसों अधिक है, जो कोऊ समझै भेव।
सतगुरु के सेये बिना, मिले न हरिकी सेव ॥१५२॥
स्वामी जिहिं २ गांम सिधावैं। दरशन हेत भीड़ लग जावैं ॥
करि दरशन सब होंय सुखारी। मानो रंक निधि पाई भारी॥१॥

करैं दण्डवत शीश नवावैं । चरणान में बहु भेंट चढ़ावै ॥
दोउ कर जोरि बिनै सब भाषै। शिष्य होन की मन अभिलाषै॥२
करैं शिष्य उपदेश सुनावैं । हरि हरिजन की सेव बतावैं ॥
धर्म भागवत कह समुझाई । वेद शास्त्र सम्वत सब गाई॥३॥
सब जीवन पर करुणा राखो । कबहुँ कठोर बचन जनि भाषो॥
झूठ क्रोध निन्दा तजि देवो । बिन प्रसाद सुख और न लेवो॥४
सतगुरु के मारग पग धारो । हरि सतगुरु बिच भेद न पारो ॥
मन माधुर्य रस माँहि समोवो । घरी पहर पल वृथा न खोवो॥५
नवधा भक्ति करौ मन लाई । प्रेम लक्षणा हिय प्रगटाई ॥
परा भक्ति सबको है सारा । पिय प्यारी को नित्य बिहारा॥६
जैसो जहँ देखें अधिकारा । तैसो तहँ पर करैं प्रचारा ॥
इहि विधि बहुत देश अरु ग्रामा। भक्ति प्रचारी अतिहि ललामा॥७
शिष्य विरक्त किये बहुतेरे । सेवक शिष्य भयेउ घनेरे ॥
बढ़ी जमात सन्त समुदाई । सबके हृदै प्रेम रस छाई ॥८॥
दो०—वृन्दावन के दरश हित, रहै चटपटी लाय ।
कब पहुँचे वृन्दा विपिन, तन मन हिय हर्षाय ॥१५२॥
समय पाय वृन्दावन आये । दरश करत मन अति हर्षाये ॥
यमुना शुभग बहै चहुँ ओरा । वायु सपरसें लेत हिलोरा ॥१॥
मध्य कमल फूले बहु रंगा । तिन पर मँडरावत बहु भृंगा ॥
पुलिन स्थली शोभा अति भारी । डोलैं सारस हंस सुखारी ॥२॥
दोऊ तट वृक्षन छवि छाजैं । तिन पर शुक पिक चातक राजैं॥
मधुरी मधुरी बोलैं बानी । पिय प्यारी की मोद कहानी॥३।
उमँगि उमंगि कर नाचैं मोरा । सब मिलि सग मचावै सोरा ॥
लता झूमि रहि झूम झुमारी । तरु तमाल की शोभा भारी॥४

कदम्ब श्रेणी सोहै अति नीकी। रवि शशि उपमा लागे फीकी॥
मृगी यूथ चहुँ दिश को धावै। भोरी चितवनि चित्त लुभावै॥५।
विहार घाट सुन्दर सुखदाई। तहां की शोभा अति अधिकाई॥
गहवर कुञ्ज कुसुम बहु फूलै। पिय प्यारी के मन अनुकूलै॥६।
तहां स्वामी आये संग सन्ता। जै जै धुनि बोलै रसवन्ता॥
जमुना तट कदमन की भीरा। शीतल मन्द सुगन्ध समीरा॥७।
तहां कदम तर आसन लाई। बैठे स्वामी अति छवि छाई॥
सन्तन को हिय अति हर्षायो। नाम धुनि कों मन ललचायो॥८

दो० स्वामी सब के मध्य में, सन्त सबै चहुँ ओर।
 नाम ध्वनि होवन लगी, नृत्यत मोर मरोर॥१५४॥

ढोलक ताल मृदंगनि साजैं। अन २ भाँतिन बाजे बाजैं॥
भयो कुलाहल चहुँ दिश माहीं। आनन्द उमगि हियो भरि जाहीं॥१
बहै प्रेम की नैनन धारा। तन मन की नहिं रही सँभारा॥
इहि विधि आनन्द मोद बढ़ायो। कछुक देर हिय ध्यान लगायो॥२
निज कृत करि जमुना में न्हाये। श्रीठाकुर सेवा पधराये॥
सिंगार भोग आरती कीनी। अपनी अपनी सेवा लीनी॥३॥
राज भोग धरि शयन कराई। सब सन्तन पंगति बैठाई॥
करि पंगत कीनो विश्रामा। हिय सुमिरत श्रीराधेश्यामा॥४
उत्थापन करि भोग लगायो। कथा करन को समय सुहायो॥
सबै सन्त नाम धुनि कीनी। भई कथा सुन्दर रस भीनी॥५॥
सब शिष्यन में परम प्रवीना। दास वृन्दावन अति रस भीना॥
अठारहसे द्वादश परमानो। गुरु शरणा आये यह जानो॥
सो नित कथा करैं मन लाई। सबके हृदय प्रेम भरि जाई॥६॥
प्रेम वारि नैनन भरि आवै। जब वृन्दावन महिमा गावै॥

वृन्दावन में अति कर प्रीती । जैसी है रसिकन की रीती ॥७॥
यातें नाम वृन्दावन दासा । श्रीगुरुदेव कियो परकासा ॥
कथा रसाल करें सुखकारी । यातें सेवा के अधिकारी ॥८॥

दो०—दास वृन्दावन अति सुघर, भक्ती रसकी रास ।
गुरु सेवी सन्तन प्रिय, करि वृन्दावन बास ॥१५५॥

कथा समाप्त नाम धुनि छाई । सन्ध्या आरति अस्तुति गाई ॥
ब्यारू भोग धरि शयन करावे । इहि विधि अष्ट पहर बितवावें॥१
नाम रूप लीला अरु धामा । सेवें सहज सदा अभिरामा ॥
दास वृन्दावन अति सुखदाई । स्वामीजी की आज्ञा पाई ॥२॥
अति सुन्दर मन्दिर बनवायो । श्रीठाकुर सेवा पधरायो ॥
राग भोग सेवा के काजा । देवे द्रव्य बड़ौदा राजा ॥३॥
सन्त बहुत तहां नित राजे । श्यामाश्याम भजन के काजे ॥
सबकी सेवा होवे नीकी । आसा पूरे सबके हीकी ॥४॥
रामदासजी संग जमाता । भक्ति प्रचार करें जग त्राता ॥
टोपी गोल शीश पर राजें । लम्बी तीखी सुन्दर छाजें॥५॥
टोपी वारे बाबा कहई । दरश करत आनन्द सब पहई ।
टोपी वारी कुञ्ज बखानें । नाम लेत सब कोई जानें॥६॥
लीला कृष्ण बहुत करवावें । यातें लीला धारि कहावें ॥
या विधि रामदास महाराजा । गुरु प्रताप कीने बहु काजा॥७॥
भजन प्रभाव तेज बहु बाढ़्यो । बहु जीवन कों जगतें काढ्यो ॥
बहुतन को हरि धाम पठाये । बहुतन कों हरि भक्ति दृढ़ाये॥८

दो०—बहुत देश कीने भगत, फिर २ साधुन संग ।
पुनि वृन्दावन आय कें, लीला लखी अभंग ॥१५६॥

सोरठा-रसिकन को सुख दीन, श्यामाश्याम लडाय के।
प्रेम मगन रस लीन, कुञ्ज माधुरी सेवहीं ॥१॥
अनगिन शिष्य भये इन केरे। गुरु भक्त हरि जनके चेरे॥
तिनमें बड़ वृन्दावन दासा। स्वामी चरण कमल की आसा॥१
श्रीगुरु पद में तन मन पागा। रुचि लै सेवै भरि अनुरागा॥
खोय अपनपौ और न जानैं। श्रीहरि गुरु अपने करि मानैं॥२
सबन मानदै आप अमानी। सबसों बोलें मीठी बानी॥
आठों पहर भाव में रहहीं।गुरुचरणन ताजि अनतन जहहीं॥३
हरि सेवा अस्थान सँभारे। गुरु सेवा में भूल न पारे॥
सन्त सेव में परम प्रवीना। सबसों सरल रहैं अति दीना॥४
कबहुँ हिये अभिमान न आनें। निन्दा स्तुति सम करि मानें॥
महा विद्वान तोहु अति भोरे। सब जानें पर बोलें थोरे॥५॥
हरी गुरू संतन कों सेवै। काहु सों सेवा नहिं लेवै॥
बड़े परिश्रमी आलस नाहीं। रहैं निरन्तर सेवा माहीं॥६॥
कबहूँ हरिकी कबहूँ गुरु की। कबहूँ स्थान और सन्तन की॥
शान्त रहै तेजी नहिं लावै। थोरो सोवै थोरो पावै॥७॥
परम धीर सन्तोष सदाहीं। कोऊ मनमें इच्छा नाहीं॥
ऐसे सद्गुण जा शिष माहीं। सो गुरु को तत्काल रिझाहीं॥८
दो०—शुद्धभाव हिय सरल लखि, हरि हरिजन में प्रीत।
तुष्ट भये गुरु देव श्री, पात्र जान रस रीत॥१५७॥
चरन कमल सेवा समय, उर में भयौ हुलास।
श्रीस्वामी बोले बचन, सुनु वृन्दावन दास॥१५८॥
यह वृन्दावन परम सुहायो। पिय प्यारी के अति मन भायौ॥
नित्य धाम याही को नामा। करो भाव दृढ़ याही ठामा॥१॥

भाव भये बिन दरशै नाहीं । कोटि उपाय विफल ह्वै जाहीं ॥
एक कृपा करि दरश दिखावै । साधन किये कोउ नहिं पावै॥२॥
बड़ो भजन एकै विश्वासा । श्रद्धावन्त पहुँचि हैं पासा ॥
सब कछु छांड़ि मनावौ याही। औरन तें मन धरि अवज्ञाही ॥३
महावानी को करो विचारा । तामें सब कीनों निरधारा ॥
ताके अधिकारी हैं थोरे । सबसों रहस्य कहो जनि भोरे॥४
पढ़ैं सुनैं भाषैं कहा होई । परम रहस्य जानैं कोई कोई ॥
श्री हरिप्रिया रहसि रस गाथा। जब पावैं तब आवैं हाथा ॥५॥
अब मैं कहों तोहिं समभाई । जैसी अपन रीति चलि आई ॥
यही रीति धारो मन लाई । तो सहजें दम्पति पद पाई॥६॥
रंग भवन राजत रंग देवी । गौरश्याम की रुचि लै सेवी ॥
हम तुम सब हैं तिन परिकर में। सखी रूप राजत निज घरमें ॥७
इष्ट हमारे पीतम प्यारी । रुचिलै सेवौ कुञ्ज बिहारी ॥
नित्य बिहार निरन्तर होई । जाको आदि अन्त नहिं कोई॥८
विपिन राज की कुञ्ज निकुञ्जा । बिहरत दोऊ भरे रस पुञ्जा ॥
अष्ट सखिन कौ निज परिवारा। सेवत जहँ जाकौ अधिकारा॥९॥
श्री रंगदेवी की रुचि कारी। सोई सेवा सिर पर धारी ॥
कल कंठ्यादिक सखि सँग सोहैं। रंग देवी के मनको मोहैं ॥१०॥
दो०-रंग देवी के यूथ में, परिकर सखी अपार ।
तिनसों हिलमिलरहौसदा, निरखौ नित्य बिहार ॥१५९॥
श्री रंग देवी आय कैं, श्री निम्बारक रूप ।
प्रगट कियो जग जीव हित, भक्ती भाव अनूप ॥१६०॥
श्री स्वामी मारग अनुसरियो । श्री आचारज उत्सव करियो ॥
पिय प्यारी कौ निज कर जानौ। सरवस हरि हरि जनकौ मानौ॥१

कमल पत्र वत जग में रहियो। नाम रूप लीला गुण गहियो॥
अब मैं निकुञ्ज भवन को जाऊँ। तीन दिवस यहां और रहाऊँ।२
रहूँ एकान्त यमुन के तीरा। गहवर कुञ्ज कदम की भीरा॥
तीनों दिवस कछू नहिं पाऊँ। बैठि निरन्तर ध्यान लगाऊँ॥३।
तुम रहनो सेवा के माहीं। मेरे ढिंग कोऊ नहिं आहीं॥
तोकों पिय प्यारी दरशे हों। सखी भाव मय रूप दिखे हों॥४
जैसो रूप देखि तुम पावो। तैसो हिय में ध्यान लगावो॥
रमा सखी मेरो है नामा। वृन्दा सखि तव रूप ललामा॥५
अस कहि स्वामी ध्यान लगायो। जहाँ गहवर यमुना तट भायो॥
पिय प्यारी को रूप निहारी। तदाकार वृत्ती भइ भारी॥६॥
देही भान रह्यो कछु नाईं। अद्भुत लीला हिय प्रगटाई॥
मंजु कुञ्ज बैठे पिय प्यारी। जमुना तट गहवर सुखकारी॥७
झरि २ सुमन जमुन में परहीं। चक्राङ्कित ह्वै मनको हरहीं॥
शीतल मन्द सुगन्ध समीरा। बहै हरै तन मन की पीरा॥८॥
दो०—अद्भुत रूप निहारिकैं, प्रगट्यो रूप अनूप।
रंग देवी के यूथ की, रमा नाम सुख रूप॥१६१॥
पचपन सत अठारह जानौ। नित्य धाम पाये यह मानौ॥
सोरठा जै जै कहैं सब सन्त, धन्य धन्य वृन्दा विपिन।
जहाँ ऐसे रस वन्त, सखी रूप परगट करयो॥१०॥
सखी रूप सबको दरशावा। पिय प्यारी को भेवन पावा॥
सो देखें वृन्दावन दासा। जो नित रहे स्वामि के पासा॥१
संत महन्त भक्तन सुनि पावा। तिनके उर आनंद अति छावा॥
धन्य धन्य स्वामी कहि गाईं। वृन्दावन महिमा प्रगटाई॥२॥
नेंक हृदय अनुरागी पावै। ताहि लै निज गोद बिठावै॥

जिनकी है अतिशय कर प्रीती। सो निश्चय पावै रस रीती॥३॥
अस चरचा करते सब आवे। तहँ की रज शीश चढ़ावे॥
पुनि पुनि लोट पोट ह्वै जाई। प्रेमानन्द हिये भरि आई॥४॥
नाम धुनी सब मिल कर कीनी। दशौं दिशा आनद में भीनी॥
दास वृन्दावन अति मन भायो। रविजा तट इक मंडप छायो॥५
अखंड कीर्तन तहँ बैठायो। पुनि इक मंडप और छवायो॥
गान समाज तहां पर होई। रास विलास कथा रस भोई॥६
पत्र बहुत जहँ तहँ पठ वाये। सन्त समाज भक्त बहु आये॥
एक मास लगि उत्सव कीनो। संतन कों आनंद बहु दीनों॥७
श्री संतन के अति मन भाये। श्री वृन्दावन दास सुहाये॥
स्वामी की गादी बैठाये। अति अद्भुत शोभा छवि छाये॥८
दो०–स्वामी की रहनी रहै, रटै निरन्तर नाम।
रूप लखैं लीला कहैं, बसि वृन्दावन धाम॥१६२॥
मङ्गल आरति शैन प्रयन्ता। नीकी सेव करैं रसवंता॥
समय २ के पद सब गावैं। विविध सामग्री भोग लगावैं॥१॥
उत्सव मंङ्गल खूब बढ़ावे। बर्ष दिना में जेते आवे।
साधू सेवा खूब करावैं। भक्तन भीर तहां नित छावैं॥२॥
नाम धुनी सबते करवावैं। कथा सुनन जो कोऊ आवै॥
रसमय कथा करैं मन लाई। वृन्दावन महिमा दरशाई॥३॥
कुञ्ज केलि जिनको नित भावैं। परा भक्ति मैं चित्त लगावै॥
भीजि रहैं भावना माई। युगल माधुरी नैनन छाई॥४॥
रुचै न दूसर कोऊ बाता। नाम रूप लीला मन राता॥
अद्भुत लीला भाव बतावै। रसिकन हिये प्रेम रस छावै॥५॥
श्यामाश्याम सखियन के संगा। नाना खेल करत रस रंगा॥

सुमन वाटिका बरनि सुनावैं। लता भूमि महिमा दरशावैं॥६॥
वृच्छन के बहु भेद बतावैं। पंछिन की जाती समुझावैं॥
नदी सरोवर शैल सुहाये। विविध रंग फूलन करि छाये॥७॥
झरनें झरत पवन सुखदाई। शीतल मंद सुगंध सुहाई॥
फव्वारे छूटत चहुँ ओरा। नृत्य भेद दिखरावैं मोरा॥८॥
मंडल रास बन्यो सुखकारी। ताकी शोभा बरनैं भारी॥
बाजन के बहु नाम बतावैं। गान नृत्य सुर भेद जनावैं॥९॥
हास विलास भाव हैं जेते। दरशावैं रसिकन कैं हेते॥
सुनि२ रसिक अधिक सुखपावै। सात्विक अष्टभाव प्रगटावै॥१०॥
रसमय बचन रसीली लीला। सुनै संत सब रसिक रसीला॥
इक टक देखत स्वामी ओरा। जैसे मानों चंद चकोरा॥११॥
हिय उमँगत लै प्रेम हिलोरा। घन देखत जिमि नाचत मोरा॥
श्रोता बहुत तहाँ नित आवै। सुनत कथा कबहू न अघावै।१२

दो०—प्रेमाश्रु सबके बहैं, भूले तन मन गेह।
जग की छूटत वासना, दिन दिन बाढ़त नेह॥१६१॥

नाम रूप लीला अरुधामा। चरचा इनकी आठौं यामा॥
हरि हरि जनकौं नित्य लड़ावै। वृथा काल कबहूँ नहिं जावै॥१॥

छप्पै—प्रातकाल सौं नेम संत जैसे करि आये।
सेवा सुमरन सावधान चरनन चितलाये॥
कथा कीरतन नेम प्रेमसौं हरि गन गावैं।
हरिजन श्याम सनेहिन सौं मिल सुनैं सुनावैं॥
अलीमाधुरी मनस तन धनको जिन फल लियो।
राधामाधव भजनबिन कालवृथा जानन दियो॥१॥

कथा स्वामिकी जो सुन पावै । सो निश्चय हरि शरणै आवै॥
निरस हृदय को सरस बनावै । पारस परसि कुधातु सुहावै॥२॥
स्वामि शरणमहँ जे जन आये। काल व्यालते भय नहिं पाये॥
बहुतन कों रसवन्त बनाये । बहुतन कों हरिधाम पठाये॥३॥
जो कोऊ वृन्दावन आवै । स्वामी दरश कथा मन लावै ॥
सुनिकै कथा मगन ह्वै जावै । चरण शरण होनो सब चावै॥४॥
राजस भाव तुरत मिट जावै । नम्र भाव सों विनय सुनावै ॥
तिन्हें शरण लै भक्ति दृढ़ावै । वृन्दावन में प्रीति बढ़ावै ॥५॥
इहि विधि बहु जीवन सुखदीना। जगत काढ़ि शरण महँ लीना ॥
राजस तामस असुर सुभावा । तिनके हृदय प्रेम प्रगटावा॥६॥
शिष्य बहुत स्वामी सुखदावा। दास रघुनाथ सबन मन भावा॥
तिनको चरित कहूँ कछु गाई । जिहि विधि शिष्य भये ये आई॥७
मोहनपुरा नाम इक गामा । जयपुर राज परम अभिरामा ॥
जन्म गाम तिनको है सोई । श्रीठाकुर सेवा घर होई ॥८॥
अंकुर भक्ति हिय प्रगटायो । बाल अवस्था परम सुहायो ॥
मंदिर खेलत माहिं बनावै । श्रीठाकुर सेवा पधरावै ॥९॥
करै आरती भोग लगावै । मात पिता देखत सुख पावै ॥
लरिकन संग नाचै अरु गावै । सियाराम की रटन सुनावै॥१०॥
देखें सुनें करें घर जैसो । पुनि २ भाव दिखावत तैसो ॥
सात वर्ष तें द्वादस ताईं । विद्याध्ययन कीन मन लाई॥११॥
पढ़िके पंडित भये प्रवीना । मात पिता व्याहन मन दीना॥
इनकी रुचि व्याह में नाहीं । कौन परै भव बंधन माहीं॥६॥
यह जग को फन्दा है भारी । हरिकी भक्ती देय बिसारी ॥
मानुष देह वृथा जग जाई । मोह जाल लेवें लपटाई ॥७॥

स्वारथ प्रीत करैं सब कोई। विपत परे पर छाँड़ैं सोई।
अस विचार निश्चय उर कीना। सबको सार भजन हरि चीना।८
दो०—केते पंडित पचि मुवे, करि करि कोटि उपाय।
एक हरिके भजन बिन, बंधन नाहिं नसाय ॥१६२॥
सो०—करूँ भजन हर्षाय, घर को बंधन छाँड़िके।
लेवैं हरि अपनाय, दीन जानि हियमें माहिं ॥११॥
व्याह होन दश दिवस रहेऊ। अर्ध निशा घर छाँड़ि चलेऊ ॥
द्वारावती दरश करि पाये। छाप लेय बृन्दावन आये ॥१॥
सब ठाहीं दरशन बहु कीना। श्रीस्वामी आश्रम पग दीना ॥
श्रीस्वामी दरशन मन भाये। सुनिके कथा हिये हर्षाये ॥२॥
बारम्बार चरन सिरनावै। हाथ जोरिकें विनय सुनावै ॥
हे स्वामी राखौ शरणाई। दीन जानि लेवौ अपनाई॥ ३॥
राम तिलक तेरे सिर राजै। मेरो शिष्य बनै किहिं काजै ॥
मैं मन सुखी करूँ मन भाई। श्रीगुरुदेव किये कोउ नाई॥४॥
श्रीस्वामी आज्ञा जो होई। अब मैं बेगि करूंगौ सोई ॥
चरण तुमार मोर मन लागा। श्यामा श्याम नेह में पागा॥५॥
सुनिकें कथा हियो हुलसायो। बृन्दावन में मन उरझायो ॥
रसिकन को रस मो मन भायो। यह अनुभव मेरे उर आयो॥६॥
और कहूँ मन नाहिं ठहरावै। बारम्बार यहीं पर आवै ॥
चाह चटपटी ऐसी लागी। कब होऊँ चरनन अनुरागी॥७॥
वेद उपनिषद बहु पढ़ि देखा। या रस को नाहीं कहुँ लेखा ॥
सो रस बृन्दावन में पेखा। याही तें लेऊँ मैं भेखा ॥८॥
दो०—सरल भाव हिय शुद्ध लखि, भावुक पुनि विद्वान।
दीनी दीक्षा हर्षि कै, पात्र समझि रस दान ॥१६४॥

अठारहसै त्रेपन परमानो । शरण दिवस इन काहू जानो ॥
होत शरण अनुभव प्रगटायो । मानों जन्म दूसरो पायो ॥
जग भटकत जिमि घर में आयो । आवत ही घर सुख सरसायो ॥ १
संतन नम्र दण्डवत करहीं । श्रीठाकुर सेवा मन धरहीं ॥
गुरु सेवा में तत्पर रहहीं । दिनप्रति भक्ति दृढ़ गहहीं ॥ २॥
काहू विधि करि नाहिन काचे । हरी गुरू संतन सों साचे ॥
रुचि लै सेवा करै सुहाई । श्रीस्वामी को लिये रिझाई ॥ २॥
स्वामी रीझ अपनपो दीनो । कह्यो रहसि भाव रस भीनो ॥
समझि तत्व अतिही हर्षाये । श्रीस्वामी चरनन लपटाये ॥ ३॥
स्वामि उठाय गोद में लीना । बरद हस्त मस्तक पर दीना ॥
परसत हस्त वस्तु हिय चीना । श्यामा श्याम स्वरूप नवीना ॥ ४॥
कुञ्जकेलि क्रीड़ा दरशाई । अपनो रूप सखी लखि पाई ॥
हस्त कमल जब लियो उठाई । भयो प्रकंप देह सुधि आई ॥ ५॥
स्वामी गोद अपन को देखा । दूसर कोइ तहाँ नहिं पेखा ॥
विकल दशा जिमि जल बिन मीना । बोले बचन महा अति दीना ॥ ६
स्वामी आप कहा यह कीना । जलतें मुहिं बाहर क्यों कीना ॥
जल बिन अन्न में जीवों कैसे । मेरी दशा मीन की जैसे ॥ ७॥
तब स्वामी ऐसी विधि कीनी । बिकल दशा हिय की हरलीनी ॥
बोले बचन महा सुखदाई । सुनु सब तोहि कहूँ समुझाई ॥ ८॥
दो०—जीवन के उद्धार हित, जगमें राखो देह ।
चित्त वृत्ति निज रूप में, निश्चय पैहो गेह ॥ १६५॥
सो०—मैं जाऊँ अब कुञ्ज, रँगदेवी आज्ञा भई ।
तुम रहियो सुख पुञ्ज, मेरी आज्ञा पालकें ॥ १२॥
यहँ कारज पूरो करि लेहो । तबहि निकुञ्ज भवन रस पैहो ॥

रहनी रहो करो सब काजा। यह उपदेश हमारो आजा॥१॥
रसकी रीत सबै तुम जानों। ताही को सरवस करि मानों॥
पिय प्यारी दीन्हे दरशाई। सोई ध्यान करो मन लाई॥२॥
जब कारज पूरो है जावै। तब सपने लीला दरशावै॥
रँगदेवी लैवे को आवै। निकुञ्ज भवन तबहि तू पावै॥३॥
अस कहि स्वामी कंठ लगाये। लाड़ प्यार कीने सुखदाये॥
पुनि सब संतन कथा बुझाई। जो रँगदेवी आज्ञा आई॥४॥
सात दिवस यह और रहाऊँ। तपाछे मैं कुञ्ज सिधाऊँ॥
संत सबहिं बोले हर्षाई। धन्य २ जो यह दरशाई॥५॥
भजन करैं सब याही काजा। रसिक संत अरु भक्त समाजा॥
सेवक शिष्यन जो सुनि पाई। दरशन हित आये सब धाई॥६
रसिक महंतरु संत समाजा। बड़े बड़े राजा महराजा॥
लगी भीड़ दरशन के काजा। करि दरशन आनन्द उर साजा॥७
श्रीस्वामी पद्मासन लाई। रँगदेवी चरनन चित ध्याई॥
झाँकी श्यामाश्याम लखाई। देहि सुधि सब गयेउ भुलाई॥८

दो०—सहस सखिन के बीच में, मंदमंद मुसकात।
कृपा दृष्टि अमृत झरे, सखिन हियो सरसात॥१६॥

सो०—फूलन को सिंगार, अंग अंग में फबि रह्यो।
निरखत रूप अपार, सखी रूप तुरतहि भये॥१३॥

वृन्दा नाम परम सुखदाई। यूथमिली रँगदेवी जाई॥
अठारहसौ सत्तर परमाना। कुंज निवास कियो इन जाना॥
जै जै कहँ सेवक अरु सन्ता। धन्य २ स्वामी रसवन्ता॥१॥
पुष्प वृष्टि कीनी हरषाई। नाम धुनी दिशि विदिशन छाई॥
गान समाजरु रास नवीनो। उत्सव अति कीनो रसभीनो॥२॥

आनँद नदी बही चहुँ ओरा। वृन्दावन सब रस में बोरा॥
संत महंत विरक्त सुजाना। सेवक शिष्य सबन मनमाना॥३
श्रीरघुनाथ दास सुखकारी। सहनशील पंडित वक्तारी॥
हरिगुरु संतन श्रद्धा भारी। स्वामी सेव करी रुचिकारी॥४॥
सब संतन के अति मनभाये। श्रीस्वामी गादी बैठाये॥
अति सुन्दर शोभा छविछाये। आनंद मंगल मोद बढ़ाये॥५॥
रस के आकर सब विधि ज्ञाता। जीवन के सद्विद्या दाता॥
निज परिकर में जेजन आवा। तिन्हें सखी भाव दरशावा॥६॥
रसमाधुर्य तिन्हें नित भावै। भाव अनन्य हिये प्रगटावै॥
सहज उनमनी बोलैं बानी। परम रहस्यमय अमृत सानी॥७॥
रसना नाम निरंतर चाखै। लीला गान धाम गुण भाखै॥
तनमन नित सेवा में राखै। और कछून हिय अभिलाखै॥८॥
आचारज श्रद्धा अधिकाई। उच्छव मंगल करैं सदाई।
महाबानी में उत्सव जेते। जे गाये रसिकन के हेते॥९॥
दो०-तेते सब उत्सव करैं, तन मन हिय हर्षाय।
समय समय के राग सब, अस्तुति मंगल गाय॥१६७॥
श्रीस्वामी निम्बारक केरो। रहसि उपासन भाव घनेरो॥
सहस्र सखिन सेवित पिय प्यारी। तिन बचनन श्रद्धा अतिभारी॥१
निकुंज केलि चित्तवृत्ति राखै। रसिक शिरोमनि सबहीं भाखै॥
रसिकन सों नित नेह लगावै। रसकी रीत तिन्हें समझावै॥२॥
अष्टयाम सेवा दरशावै। श्रीमहाबानी जैसी गावै॥
श्रीयमुना तट परम सुहाई। फूल बाटिका अति मनभाई॥३॥
चुनि २ फूल सन्त सब लावैं। भूषण विविध प्रकार बनावैं॥
श्रीस्वामी निज अपने हाथा। मिलि के सब संतन के साथा॥४

श्यामाश्याम सिंगार सजावै । फूल वाटिका में पधरावै ॥
फूलन को बँगला छवि छायो । सेवक शिष्यन रच्यो सुहायो५
प्यारी पियको तहँ पधराये । अति सुन्दर शोभा छवि छाये॥
लता झूमि रहि झूम झुमारी । तरु तमाल शोभित अतिभारी६
कदम श्रेणि सोहैं अति नीकी। मन भाई श्रीप्यारी पिय की ॥
मणिमय शैल बहैं तहँ झरना। फव्वारे छूटैं मन हरना ॥७॥
शीतल मंद सुगंध सुहाई । चलत पवन अतिही सुखदाई॥
कालिन्दी बहु लेतं हिलोरा । शुक पिक चातक बोलत मोरा८
दो०-सबै सन्त मिलि गावहीं, साज मृदङ्ग बजाय ।
    बीण तँबूरा बाँसुरी, सुर मंडल सुखदाय ॥१६८॥
सो०-फूलन को सिंगार, बर्णत श्यामाश्याम को ।
    अनुपम रूप अपार, रसिकन को अतिही रुचै ॥१४॥
देखौ सखि फूलन फुलवारी । फूलि २ बैठे पिय प्यारी ॥
फूलन को सिर मुकुट विराजै । फूलन माँग अनूपम छाजै ॥ १
फूलन जगमगि कलगी सोहै । फूलन चंद्रिका मनको मोहै ॥
फूलन के आभूषण पहिरे । फूलन कंचुकि सारी लहिरे॥२॥
फूलन की अँगिया उपरैना । फूलन लहँगा जारि कसैना ॥
फूल शिखर मंडप छाजारी । फूल झरोखा भूलन जारी ॥३
ठौर ठौर फूली फुलवारी । फूलमई सब दिशि विदिशारी ॥
फूल चौक में अति रुचिकारी । फूलन छूटत फूल फुवारा ॥४॥
फूल सिंहासन पास सुखारी । फूली सब ठाढ़ी सहचारी ॥
फूलई फूल किये सिंगारी । फूलन की रुच सेंज सँवारी॥५
फूलन चँवर ढुरावत फूली । फूलन बिजना लै अनुकूली ॥
ब्यारत ब्यार सुगंध सुहाई । लपट उठत मन हरत महाई॥६

कहा कहौं कछु फूल फूलकी । शोभा अति आनन्द मूल की॥
प्यारी पिय फूल फुलवारी । लै लै फूल करूँ बलिहारी ॥७॥
ऋतु ऋतु को सिंगार करावैं । संत सबै मिल हरषित गावैं ॥
इहि विधि श्यामाश्याम लड़ावैं । नित नव उच्छव मोद बढ़ावैं॥८

दो०—समय समय के भोग बहु, हित चित सों करुणाय ।
अचवन आचि वीरी छुदे, आरति अस्तुति गाय । १६६॥

सो०—पोढावें रँग महल, रंग रँगीली सेज पर ।
सखी करें सब टहल, तन मन प्रान समोय के ॥१५॥

भजन भाव की सुविधा जानी । रहैं संत तहँ बहुत अमानी ॥
तिनकी सेवा होवै नीकी । मन भाई श्रीस्वामीजी की॥१॥
संतन लखि स्वामी सुख पावें । स्वामिहि देखि संत हरषावें ॥
अरस परसपर प्रेम बढ़ावें । पिय प्यारी सों नेह लगावें॥२॥
श्रद्धा भाव बढ़ै नित दूनो । कबहूँ मन होवै नहिं ऊनो ॥
स्वामी कथा स्वातिकी वारी । चातक संतन करें सुखारी ॥३॥
सायं समय कथा जब होवै । भृंगी सम श्रोता रस भोवै ॥
तदाकार वृत्ति ह्वै जाई ।तृप्ति न होत प्याम अधिकाई॥४॥
देह गेह भूलें कुलकानी । मगन होत सुनि प्रेम कहानी ॥
वृन्दावन रस बहुविधि भाषा । नित नव नेह बढ़ी अभिलाषा५
रसिकन सों मिलिके रस चाखा । प्यारी पिय हिय में नित राखा॥
आश्रम शोभा बढ़ि अधिकाई । प्रेम प्रकाश रह्यो जहँ छाई॥६।
दरश नीक जो कोऊ आवै । शान्त सुभाव सहज होजावै ॥
स्वतः नाम उच्चारन होवै । देह गेह चिंता सब खोवै ॥७॥
दरस परस संतन को संगा । नाम रूप लीला मन रंगा ॥
सुनि २ कथा शिष्य बहु होवै । भक्ती बीज हिये में बोवै ॥८॥

दो०—उपदेशैं सबकों यही, नाम जपो मन लाय।
हरि गुरु सन्तन सेव बिन, जन्म अकारथ जाय ॥१७०॥
सो०—हरि भजवे को देह, मानुष की हरि ने दई।
झूठो जगको नेह, सुपने को सो राज है ॥१६॥
शिष्य बहुत गुरु सेवा माहीं। जमुनादास सबन बड़ आहीं॥
तिनको चरित कहूँ कछु गाई।श्रीगुरुशरण जाहि विधि पाई॥१
पूरब देश राजपुर ग्रामा। जमुना तीर परम अभिरामा॥
विप्र दम्पती तहाँ रहाई। तिनके बालक जीवत नाई॥२॥
तीरथ करन दोउ चल दीने। ब्रजमण्डल आये रसभीने॥
चौरासी परिदछना दीना। दरशन आय वृन्दावन कीना॥३
आश्रम स्वामी के जब आये। करतहिं दरश हिये हरषाये॥
हरी गुरु सन्तन शिर नावा। कथा सुनन में मनहिं लगावा॥४
कथा समाप्त स्वामि ढिग आये। हाथ जोरिकें शीश नवाये॥
नम्र भाव यह बिनय सुनाई। हमरे बालक जीवत नाई॥५॥
करौ कृपा जो पुत्र रहाई। प्रथम पुत्र करि हों शरणाई॥
श्री स्वामी बोले सुखदाई। जो मैं कहों करौ मन लाई॥६॥
राधाकृष्ण जपौ हर्षाई। तौ बालक निश्चय बचि जाई॥
विप्र दम्पती अति हरषाये। नाम रटत अपने घर आये॥७॥
समै पाय पुत्र भये चारा। वृन्दावन तबहीं पगु धारा॥
बड़ो पुत्र जनमे जय नामा। आयु वर्ष दश परम ललामा॥८
दो०—श्री स्वामी कों अर्पि के, बिनय करी हर्षाय।
तीन पुत्र यह और हैं, हरि जन देउ बनाय ॥१७१॥
सो०—शरण सबन कों लीन, तिलककण्ठि गुरु मंत्र दै।
जाओ घर रस भीन, भजन सेव करियो सदा ॥१७॥

विप्र दम्पती घर में आये । पुत्र तीन संग में मन भाये ॥
घर बसकें भक्ती दृढ़ कीनी । बहु जविन कों शिक्षा दीनी॥१॥
जनमे जय गुरु पास रहाई । विद्याध्ययन करै मन लाई ॥
सन्तन नम्र दण्डवत करहीं । श्री स्वामी आज्ञा अनुसरहीं॥२॥
पूरब सञ्चित सब प्रगटावा । भक्ति बीज अंकुर हिय आवा ॥
मात पिता को मोह भुलायो । हरि गुरु सन्तन में सुख पायो॥३
पिय प्यारी सों नेह बढ़ायो । सदा रहै आनन्द उरछायो ॥
स्वामी के मन भाव दृढ़ावा । पात्र जानिकें शिष्य बनावा॥४॥
उन्नीसैं [illegible] हु जानो । शरण दिवस इनको परिमानो॥
जमनादास नाम धरि दीना । जन्म दूसरा भयो नवीना ॥
भेष पाय अति ही हरषाये । श्री स्वामी चरनन लपटाये॥५॥
सब सन्तन के अति मन चाहै। करैं दण्डवत हीय उमाहै ॥
बहुत काल लगि सेवा कीना । हरी गुरू सन्तन सुख दीना॥६॥
सब सन्तन के मन अस आई । छाप द्वारका लेवै जाई ॥
श्री स्वामी जू के मन भाई । जमनादासहिं बोलि सुनाई ॥७
जाओ तुम सन्तन के संगा । दरश द्वारका करो अभंगा ॥
बहुत देश सन्तन दिखरावो । बहु जीवन कों भक्ति दृढ़ावो॥८
आज्ञा श्री स्वामी की पाई । चले सन्त तब मन हरषाई ॥
मग में सन्त और मिल आई । दिन २ संग बढ़त ही जाई॥९॥
आये पुस्कर राज सुहाये । स्नान कीन आगे कों धाये ॥
पुनि मेवार और गुजराता । पावन करत चले जग त्राता॥१०
साधू सेवा बहु विधि होवै । गांव गांव सत्संगत बोवै ॥
काठियवार परम सुखदाई । आगे श्री गिरनार सिधाई॥११।
पुरी सुदामा लगी सुहाई । स्नान गोमती कीनो आई ॥

पुनि आये द्वारा वति धामा । सिंधू दरश परम अभिरामा ॥१२
दो०—नाथ द्वारिका दरश करि, छाप लीन हर्षाय ।
कछुक दिवस तहँ वास लै, वृन्दावन मन भाय ॥१७२॥
सो०—सन्तन भीर अपार, दिनहिं दिन बढ़ती रहै ।
घर घर माहिं प्रचार, भक्ति को अति ही भयो॥१८।
गांव २ पधरावनि होई । नित २ नूतन होत रसोई ॥
कथा कीरतन ठाकुर सेवा । भाव चाव सों करैं सदेवा ॥१॥
सन्तन को येही है मेवा । तब पावहिं जब करहीं सेवा ॥
काठियवार देश मन भायो । भक्ति भाव मय लगत सुहायो॥२
चातुर मास तहाँ ही कीनो । बहु जीवन को दीक्षा दीनो ॥
जमुनादास परम परवीना ।सब सन्तन मिलि मुखियाकीना॥३
आसन प्राणायाम चढ़ावें । घण्टा चार समाधी लावें ॥
भजन तेज मस्तक झलकावें । दरशनीक मोहित ह्वै जावें ॥४॥
शिष्य होइकें भक्ति बढ़ावें । चरनन में बहु भेंट चढ़ावें ॥
भजन रीत सेवा की जोई । तिनको समझावें रस भोई ॥५॥
इहि विधि बहु जीवन सुख दीना। आये वृन्दावन रस भीना ॥
हरि गुरु चरण दण्डवत कीना। सौंज सबै आगे धरि दीना ॥६॥
भूषण बसन अरु द्रव्य अपार। ठाकुर सेवा को उपचारा ॥
जाजम दरी गलीचा भारी । आश्रम की हू सौंज अपारी ॥७॥
सन्तन सबन बड़ाई कीना । जमुनादास परम परवीना ॥
श्रीस्वामी के अति मन भाये । जो सन्तन को लगत सुहाये॥८।
रीत भांत सब दीन बताई । परम्परागत जो चलि आई ॥
ताही दिन स्वामी मन भाई । सपने में लीला दरशाई ॥९॥
कुञ्ज भवन जमुना फुलवारी । मंडप लता बन्यो सुखकारी ॥

श्यामाश्याम सखिन के सँगा । गेंद उछारत रमत अभंगा ॥१०॥
ऊँची अधिक कौनकी जावे । करत होड़ उर में उमगावे ॥
श्री रंग देवी आज्ञा पाई । ससीकला स्वामी ढिग आई ॥११॥
हाथ पकरि बोली सुखदाई । चलौ सखी रंग देवि बुलाई ॥
सुनत बचन मन अति हर्षाई । ताही समय आँख खुलि आई॥१२
पुलके अंग स्वेद दरशावा । सात्विक अष्ट भाव प्रगटावा ॥
जमुनादासहिं तुरत जगावा ।सुपन गाथ सब बोलि सुनावा॥१३
मेरो काज भयो अब पूरो । सेवा में रहियो तू सूरो ॥
अब मैं निकुञ्ज भवन को जाऊँ। रस रीती सारी समझाऊँ।।१४॥
दो०-रसिकन के सँग कीजियो, मृदु रस को व्योपार ।
थोरे थाके महरमी, सबको नहिं अधिकार ॥१७२॥
सो०-खरी खरग की धार, रसिकन की यह संपती ।
राखो अधिक सँभार, जौ चाहो निज धामको ॥१९॥
असकहि स्वामि मौन गहि लीना। बैठि इकान्त ध्यान हिय कीना॥
जो सुपने में रूप निहारा । नखशिख लौं ताही उर धारा॥१॥
निज स्वरूप सखि को प्रगटावा । नाम रसीली परम सुहावा ॥
गुन्नीसहै सै [illegible] परमानौ । कुञ्ज निवास भयो यह जानौ ॥
आपन यूथ मिली हरषाई । रँग देवी चरनन शिर नाई ॥२॥
सेवक सन्त महन्त महाना । रसिक विरक्तसु परम सुजाना॥
सुनिकैं सब आये भइ भीरा । धन्य २ स्वामी मति धीरा ॥३॥
महिमा धाम अमित प्रगटाई । रज रानी प्रभाव दरशाई ॥
यमुना पुलिन परम मन भायो। संकीर्तन कीनो सुषदायो ॥४॥
गान समाज अरु रास बिलासा। उच्छव को बहु बढ्यो हुलासा॥
करि उत्सव सन्तन मन भाये । जमुनादास जु परम सुहाये॥५॥

स्वामी की गादी बैठाये । अति सुन्दर शोभा छवि छाये॥
हरि गुरु सन्तन सेव प्रभावा । भक्ती तेज बढ्यो अधिकावा ॥६
टोपी वारे श्री महाराजा । नाम प्रसिद्ध सकल सुख साजा॥
रामदासजी सों चलि आई । टोपी छाप सबन लगि जाई॥७॥
साधू सेवा जो चलि आई । श्री स्वामी जू और बढ़ाई ॥
वर्ष दिना के उत्सव जेते । भाव चाव सो करहीं तेते ॥८॥
ठाकुर सेवा निजकर करहीं । प्रेम मगन आनन्द उर भरहीं॥
सेवा वैभव खूब बढ़ायो । सेवक शिष्यन के मन भायो॥९
जब कहुँ बड़ौ भँडारो होई । स्वामि तहाँ के मुखिया होई ॥
सेवक शिष्य भये बहुतेरे । गुरु भक्ता हरि जनके चेरे ॥१०॥
दो०—उपदेशैं सबको यही । नाम रटो मन लाय ।
हरि हरि जन सेवा करौ । तन मन द्रव्य लगाय ॥१७४॥
शिष्य बहुत स्वामी मन भाये । कल्यानदास जु अति सुखदाये॥
बाल अवस्था शरणौं आये । पूर्व जन्म भक्ति प्रगटाये ॥१॥
उन्नीसै बाईस हु जानो । शरण दिवस इनको परिमानो॥
आयु वर्ष दश ही की जबहीं । हरि में प्रीत बढ़ाई तबहीं ॥
सन्तन नम्र दण्डवत करहीं । कृपा दृष्टि श्री गुरु की ढरहीं॥२॥
देखि सुभाव सन्त हरषाई । बाल अवस्था भक्ति दृढ़ाई ॥
सहन शील सबके गुन ग्राही । हरि गुरु टहल करैं मन चाही॥३
इहि विधि बहुत काल पर्यंता। श्री गुरु सेव करि रसवन्ता ॥
धाम गमन स्वामी मन भायो। तीन दिवस पहले दरशायो॥४॥
सब शिष्यन सों कहि समुझाई । तीन दिवस यह देह रहाई ॥
एकादशी दिवस जब आवै । देह बदल निश्चय यह जावै ॥५
रँग देवी चरनन चित लाऊँ । अपनो रूप सखी निज पाऊँ ॥

नित्य विहार निरन्तर ध्याऊँ । श्यामाश्यामहिं लाड लडाऊँ ।।६
जब यह बात सबन सुनि पाई। दरश हेत आये सब धाई ॥
सन्त महन्त विरक्त सुजाना । सेवक शिष्यन भीर महाना ।।७।।
अर्ध निशा दशमी की आई । कल्याणदासहिं बोलि सुनाई ॥
सप्त भागवत मोहि सुनावौ । याही छिन देरी मत लावौ।।८।।
पंडित सात तुरत बुलवाई । सप्त भागवत तुरत बिठाई ॥
प्रातकाल लों पूरी कीनी । अपन हाथ पूजा करि लीनी।।९
श्री स्वामी की आज्ञा पाई । ठाकुर सेवा वेगि कराई ॥
सिंगार आरती ह्वै जब आई । नित्य धाम चलवे मन भाई ।।१०

दो०-भाद्र शुक्ल एकादशी, उन चाली उन्वीस ।
प्रातः आठ बजे जबहिं, नित्य धाम गमनीस ।।१७५।।

सो०-सखी जसीली नाम, रँग देवी के यूथ की ।
पहुँची नित्य सुधाम, मनसा सब पूरन भई ।।२०।।

सेवक सन्तन के मन भायो । आनन्द उत्सव खूब मनायो ।।
पुष्प वृष्टि कीनी हरषाई । धन्य २ स्वामी सुखदाई ।।१।।
संकीर्तन कीनो मन लाई । बाजे विविध प्रकार बजाई ।।
उच्छव कीनो अति रस भीनो ।रसिक जननकों बहु सुख दीनो।।२
श्री वृन्दावन नित्य नवीनो । जाने याको आश्रय लीनो ॥
निश्चय ताहि अपन पद दीनो ।सब रसिकन यह निर्णय कीनो।।३
संत महन्त विरक्त सुजाना । रसिक अनन्यन के मनमाना ॥
दास कल्यान परम सुख दाना । हरि गुरु सन्तन सेव प्रमाना।।४
शांत शील अरु नम्र महाई । श्रीगुरु कृपा पूर्ण जिन पाई ।।
श्रीगुरु गादी दीय बिठाई । अति सुंदर शोभा छवि छाई।।५।
साधु सेवा खूब कराई । सेवक शिष्यन के मन भाई ॥

श्री स्वामी कल्याण जु दासा। भक्ती भाव किया परकासा ॥६॥
बिहारघाट पर टोपी कुञ्जा। नाम प्रसिद्ध कीन सुख पुञ्जा ॥
ठाकुर वैभव खूब बढ़ायो। संतन को अति ही सुख दायो॥७
सेवा भाव चावसों होवै। विविध सिंगार करैं रस भोवै ॥
राग भोग की बहु विधि सामा। रितु २ की होवै अभिरामा॥८॥

दो०—शरदोत्सव अतिहि रुचै, जमुना पुलिन सुहाय।
तीन दिवस लौं भीर बहु। रहैं तहां पै छाय ॥१७६॥

जमुना पुलिन परम सुखदाई। फूल वाटिका तहाँ सजाई ॥
मंडल रास अतिहि छविछाई। सखिन समाज तहाँ बैठाई ॥१॥
मध्य युगल मूरति पधरावै। रूपक रास अतिहि दरशावै ॥
तीन दिवसलौं भीर रहावै। दरशनीक अति ही सुख पावैं॥२
अन्नकूट होवै अति भारी। आठ दिवस पहिले तय्यारी ॥
विविध भाँति पकवान मिठाई। अन गिनती जु गिनी नहिं जाई॥३
जगमोहन गिरि राज बनावैं। तापर हटरी विचित्र सजावैं ॥
जलेबीन की अति मन भाई। बतासान की परम सुहाई ॥४॥
ऊँचो शिषर बनावै भारी। देखत में लागैं रुचिकारी ॥
तामें श्रीठाकुर पधरावै। विविध भांति सिंगार सजावैं॥५
बहु सामग्री धरैं चहूँ ओरा। दूध दही के भरे कमोरा ॥
मंदिर चौक सबै भरि जावैं। ठौर नेंक खाली नहिं पावैं ॥६॥
नाम कहाँ लौं बरनि सुनावैं। देखत बनैं कहत नहिं आवैं ॥
दरशनीक जेते जहँ आवैं। वाह २ कहिके मुख गावैं ॥७॥
दरशन करत मगन ह्वै जावैं। और कहूँ जानों नहिं भावैं ॥
भारी उत्सव अति सुख दाई। श्रीस्वामी करहीं मन लाई॥८॥

दो०-फूल डोल अतिहि फबै, फूल मंडनी जाय ।
चंदन अंग सिंगार पुनि, बनविहार बिहराय ॥१७७॥
तीन दिवस चंदन उतरावैं । विविध भाँति सौंगंध ररावैं ॥
श्यामाश्यामहिं तन चरचावैं । रचना विविध प्रकार रचावैं ॥१॥
तरमेवा अरु विविध मिठाई । पियप्यारी के भोग लगाई ॥
फव्वारे बहु विधि सो छूटें । ग्रीषम आनँद इहि विधि लूटें॥२॥
बनविहार विहरैं पियप्यारी । जल क्रीडा होवैं सुखकारी ॥
रथयात्रा की करि तैयारी । वर्षा रितु हिंडोल सवारी ॥३।
झाड फनुस बहुभाँति सजाई । वर्ष वर्ष प्रति नूतन लाई ॥
सैकरान रुपया लगवावै । आनँद उत्सव खूब बढावै ।।४॥
नित नूतन सिंगार सजावै । नानाविधिसों भोग लगावै ॥
निरखि२ आनँद उरभरहीं । तन मन धन न्योछावर करहीं॥५
इहि विधि बहुत काल परयंता । नीकों सेव करी रसदंता ॥
संत महंत विरक्त सुजाना । सब स्वामी कों देवैं माना ॥६॥
वृंदावन कीरति विस्तारी । प्रगट नाम कीनो सुखकारी ॥
सेवक शिष्य भये बहुतेरे । हरी गुरू संतन के चेरे ॥७॥
तिनके उर हरि भक्ति प्रेरी । भव बंधन की काटी बेरी ॥
कृपादृष्टि कीनी जिहिं ओरी । भक्ति फैल रही तिहिं पोरी॥८॥
दो०-तन मन को जो बसकरै, हरि गुरु पद सिरनाय ।
टहल करै मन मानती, ताको हरि अपनाय ॥१७८॥
यह उपदेश करैं सब पाहीं । सब साधन यामें आजाहीं ॥
दयाभाव मोपै अति भारी । कृपादृष्टि हरि कियो सुखारी॥१॥
स्वामी चरण शरण जब पाई । वृंदावन दृढ प्रीति दृढाई ॥
नाहीं कछु बल बुद्धी मेरो । दया भाव करि कीनो चेरो॥२॥

जो कुछ भाव भक्ति हिय आई। सो सब चरन शरन सों पाई।
भवारण्य में भटकत आयो। सुख को लेस कहुँ नहिं पायो ॥३
चरनन छांह पकरि बैठायो। अभय दान दीनो मन भायो॥
धाम समय स्वामी को आयो। एक मास पहले दरशायो ॥४॥
मन प्रसन्न उर आनँद छायो। नाम टेर के मोहिं बुलायो॥
माधवदास सुनों मन लाई। एक औषधी मो मन भाई ॥५॥
सब सन्तन पंगत करवावो। तिनकर चरणोदक मो प्यावो॥
माघ वदी तेरस की बाता। अपने मुख बोले जगत्राता॥६॥
मावस को पंगति भई भारी। चरणामृत लीनो सुख कारी॥
सबको रुपा दच्छिना दीनी। मनकी आसा पूरन कीनी॥७॥
ताहि निसा ऐसी मन आई। दोइ सहस्र की गेहूँ मँगाई॥
विप्रन घर घर देहुँ बँटाई। यह संकल्प कीन मन भाई॥८॥
प्रात होत सुखिया बुलवायो। सब विप्रन को जो मन भायो॥
अपन संकल्प बोलि सुनायो। तब सुखिया बोल्यो सुखदायो॥९
अपनें यहां भोजन करवावो। तो स्वामी आनन्द बहु पावो॥
श्री स्वामी बोले हरषाई। किते विप्र वृन्दावन माँई॥१०॥
चार सहस्र नौ थोक नमांई। सबकी पंगत करौ यहांई॥
दछिना हूँ कछु होनी चैये। हां देंगे तुमरे मन भैये॥११॥
दो०—बसन्त पञ्चमी आदि दै, आधे फागुन ताहिं।
एक दोय दिन बीच दै, नौ पंगत करवाहिं॥१७९॥
मन भाई दै दच्छिना, सबको मन हरषाय।
विप्र बड़ाई करत बहु, धन स्वामी सुखदाय॥१८०॥
गौडेश्वर सब सन्त बुलाये। करत कीरतन उमँगत आये॥
तिन सबकी पंगत करवाई। जै २ गौर धुनी रहि छाई॥१॥

मरकट मोर कीर सुखदाई। तिनहुँ की पंगत करवाई॥
मच्छ कच्छ जमुना जल माँई। तिनकी हु कीनी तृपताई॥२॥
श्री भागवत सप्ता बैठाई। संकीर्तन कीनो मन लाई॥
फागुन शुक्ला दशमी आई। उन्नीसौ पैंषट सुखदाई॥३॥
होरी उत्सव मंगल छायो। सब सन्तन के अति मन भायो॥
अर्ध सरवरी जब है आई। पाठ दशम में रह्यो सुनाई॥४॥
ऐसी करुणा उर में आई। मोहि हिये सों लियो लगाई॥
गद २ बाणी मोहि सुनाई। तू सेवा में रहिय सदाई॥५॥
अब मैं निज सेवा में जाऊँ। रंग देवी की कृपा मनाऊँ॥
असकहि स्वामि मौन करि लीना। श्यामाश्याम चरन चित दीना॥६
प्रातः आठ बजे हैं जबहीं। नित्य धाम गमने हैं तबहीं॥
रंग देवी परिकर मिलि जाई। कमला नाम परम सुखदाई॥७॥
वृन्दावन में खबर जनाई। सन्त महन्त सब आये धाई॥
सेवक शिष्यन भीर महाई। तन पुलकित चरनन शिर लाई॥८
चित्र विचित्र विमान बनावा। स्वामी को तामें पधरावा॥
चार भांति के बाजे बाजें। मनहुँ मेघ मण्डल धुनि गाजें॥९
संकीर्तन सन्तन सुखदाई। ढोलक ताल मृदंग बजाई॥
शोभा बरात की सी छाई। रंग बिरंग गुलाल उड़ाई॥१०॥
जमुना तट सुन्दर सुखदाई। फूल वाटिका परम सुहाई॥
फिरत बरात तहाँ पर आई। श्री स्वामी दूलह पधराई॥११॥
स्नान कीन मन में हर्षाये। अपने अपने आश्रम आये॥
श्री गुरु की कहा करौं बड़ाई। कृपा पूर्ण मोपै वर्षाई॥१२॥
पिय प्यारी कों खूब लड़ाये। सन्तन कों अति ही सुखदाये॥
वृन्दावन में कीरति छाई। धन्य धन्य कहिकें सब गाई॥१३

जीते जी कीनी मन भाई। रिद्धी सिद्धी खूब लुटाई॥
अन्त समय में यह धुनि गाई। नित्य धाम गमने सुखदाई॥१४॥
करौ अब चलबे की त्यारी। गठरिया प्रेम की भारी॥
चलौ यह पोट लै सँग में। रंगो मन युगल के रंग म॥१॥
पाछेहू भण्डारो कीनो। सब सन्तन को आनन्द दीनो॥
मोतें जो बड़ श्री गुरु भाई। तिनको गादी दिये बिठाई॥१५॥
कछुक दिवस में धाम सिधाये। सब सन्तन मिलि मोहि बिठाये॥
में सन्तन की किरपा पाई। अबलों सेव करों सुखदाई॥१६
सन्त कृपा सों सब कछु होई। मेरे तो निश्चय इतनोई॥
पूरण कृपा हरी की होई। तब ही सन्त मिले रस भोई॥१७
सन्त कृपा सों सतगुरु पावैं। सतगुरु नित्य धाम पहुचावैं॥
नित्य धाम बिलसैं पिय प्यारी। अली माधुरी सर्वस वारी॥१८॥

जो जानै अपनो बुधि बल, झूठो कहिये सोय।
किये ये हरि ही को सब होय॥१॥

दो०—श्रीमुकुन्द देव प्रणालिका, कही बुद्धि अनुसार।
बाचें सुनें जो प्रेम से, पावै नित्य बिहार॥१८०॥
उन्नीसौ निन्यानमें, अक्षय तृतिया याम।
हित चित सों पूरी करी, वृन्दावन निज धाम॥१॥

॥ इति श्री हरिप्रिया रसिक माधुरी समाप्त ॥

कुंडलिया—

धनिसो धनसो कुटुम धनि धनि तिनके पितुमात ।
हरि आचारज सेव में जिनको चित्त लगि जात ॥
जिनको चित्त लगजात वास वृंदावन पावै ।
आचारज करि प्रीत जाहि निज निकट बुलावै ॥
पावै दम्पति दरश नित बारही जो तन मन ।
हरि गुरु संतन सेव में लागे धनी सो धन ॥१॥

श्रीहरिप्रिया रसिक सुमाधुरी रसकी भरी अपार ।
गावौ सुनौं सु प्रेमसौं पावौ नित्यविहार ॥
पावौ नित्यविहार कामना पुरवहुँ मनकी ।
छको रसिक रस रास लेहु फल धर नर तन की ॥
श्रीवृंदावन अति प्रीत नेह रसिकन सों किया ।
श्रीरसिकमाधुरी पढ़त ही अपनावे श्रीहरिप्रिया ॥२॥